इतिहास दिवाकर

त्रैमासिक अनुसंधान पत्रिका

वर्ष ५ अंक २ आषाढ़ मास कलियुगाब्द ५११४ जुलाई, २०१२

मार्गदर्शक :
डॉ० शिवाजी सिंह
चेतराम
इरविन खन्ना

सम्पादक :
डॉ० विद्या चन्द ठाकुर

सह सम्पादक
चेतराम गर्ग

सम्पादक मण्डल :
डॉ० रमेश शर्मा
डॉ०ओम प्रकाश शर्मा
प्रो० सतीश चन्द्र

टंकण एवं सज्जा :
अश्वनी कालिया

सम्पादकीय कार्यालय :
ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान,
नेरी, गांव—नेरी, डाकघर—खगल
जिला—हमीरपुर—१७७००१(हि०प्र०)
दूरभाष : ०१९७२—२०३०४४

मूल्यः
प्रति अंक —१५.०० रुपये
वार्षिक — ६०.०० रुपय
itihasdivakar@yahoo.com
chetramneri@gmail.com

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय

उद्बोधन
अखण्ड भारत — डॉ. मोहन भागवत — ३

विवेकानन्दामृतम्
स्वामी जी का शिकागो व्याख्यान — स्वामी विवेकानन्द — १३

संवीक्षण
पुराणों में मलय पर्वत और केरल तमिलनाडू — डा० शैलेन्द्र कुमार शर्मा — १५
अंग्रेजी संस्कृत भाषा की एक प्राकृत बोली है — पुरुषोत्तम नागेश ओक — २२
जाहर वीर गोगा जी चौहान — कुलदीप — ३०
महान समाज सुधारक : संत पीपा जी — ललित शर्मा — ३४

स्वातन्त्र्य समर
सन् १८५७ अंग्रेज़ी सेना के अत्याचारों की कहानी — विनोद कुमार लखनपाल — ४१

स्थान वृत्त
पश्चिमी भारत का हृदय स्थल जांगल प्रदेश बीकानेर — जानकी नारायण श्रीमाली — ४५

सम्पादकीय

संस्कृतिः संस्कृताश्रिता

श्रेष्ठ मानवीय गुणों से परिपूर्ण परम्परागत जीवनशैली संस्कृति कहलाती है। भारतीय मनीषियों की सूक्ति **संस्कृतिः संस्कृताश्रिता** अर्थात् संस्कृति का मूल अधिष्ठान संस्कृत भाषा है, एक साक्षात् सत्य है। ऋषि–मुनियों की गूढ़ वाक् साधना से अनुप्राणित इस भाषा की श्रेष्ठता एवं वैज्ञानिकता सार्वभौमिक है और इस भाषा का ज्ञान–विज्ञान सदा से सम्पूर्ण विश्व समाज का मार्ग प्रशस्त करता रहा है। भारत राष्ट्र की पूरी जीवन शैली, पूरा संस्कार और पूरा चरित्र इसी भाषा द्वारा सहज स्फूर्त है।

सर्वगुण सम्पन्न संस्कृत भाषा की महिमा में भारत सरकार के निर्णय के अनुसार श्रावण मास की पूर्णिमा, रक्षाबन्धन के दिन पूरे भारतवर्ष में संस्कृत दिवस का आयोजन होता है जो इस वर्ष कलियुगाब्द 5114 में श्रावण मास प्रविष्टे 18, विक्रमी संवत् 2069 तदनुसार 2 अगस्त, 2012 को मनाया जा रहा है। यह आयोजन अब औपचारिकता मात्र बनता जा रहा है और आधुनिकता की मदहोशी में संस्कृत भाषा की निरन्तर उपेक्षित होती जा रही है। इस सम्बन्ध में महान् राष्ट्र चिन्तक दार्शनिक राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प.पू. द्वितीय सरसंघचालक माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर उपाख्य श्री गुरुजी के विचार ध्यातव्य हैं। श्री गुरु जी कहते हैं – संस्कृत का शब्द भण्डार समृद्ध है और उसके बारे में एक पवित्र भावना भी है। राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी संस्कृतनिष्ठ होने पर सभी को सहज व सरल होगी, किन्तु अरबी–फारसी मिश्रित हिन्दी विंध्याचल के आगे कोई नहीं समझेगा। यह आपत्ति स्वाभाविक रूप से रूढ़ हुए शब्दों के प्रति नहीं, अपितु सुनियोजित रूप से परकीय शब्दों के लादने के प्रति है।

वस्तुतः हमारी सभी भाषाएं, चाहे वह तमिल हो या बंगला, मराठी हो या पंजाबी, हमारी राष्ट्र भाषाएं हैं। इन सभी के लिए प्रेरणा का स्रोत भाषाओं की रानी देववाणी संस्कृत है। संस्कृत हमारी राष्ट्रीय एकता के लिए महान् संयोजकसूत्र है। हमारे शासकों में नैतिक गर्व और चरित्र बल का अभाव है जिससे वे इस राष्ट्रीय महत्त्व के विषय की ओर ध्यान ही नहीं देते। अपने वैभव और पावन साहचर्य के कारण राष्ट्रीय पारस्परिक व्यवहार के लिए संस्कृत ही एक सर्वमान्य माध्यम के रूप में कार्य कर सकती है।

गुरु गोलवलकर जी के ये सम्यक् विचार कार्यान्वित हों तो भारत की गरिमा पुनः विश्वगुरु, के रूप में सुप्रतिष्ठित होगी और फिर विश्व को एक सुखद वायुमण्डल मिलेगा, जिसमें ऋषि–मुनियों का यह मंगल संदेश व्याप्त होगा –

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।

विनीत्

डॉ. विद्या चन्द ठाकुर

उद्बोधन

अखण्ड भारत

डॉ. मोहन राव भागवत

बाबा साहिब आपटे स्मारक समिति, पंजाब द्वारा जालन्धर में पौष कृष्ण १०, कलियुगाब्द ५११२ तदनुसार ३० दिसम्बर, २०१० को अखण्ड भारत संगोष्ठी आयोजित की गई। संगोष्ठी के समारोह के अवसर पर प.पू. सरसंघचालक डॉ. मोहनराव भागवत जी ने अपने प्रस्तुत उद्बोधनमें हिन्दुओं की कमजोरी को भी भारत विभाजन के कारण के रूप में रेखांकित किया है।

'अखंड भारत', यह विषय १९४७ के बाद हमारी विषय सूची में आया। भारत कहने पर भी एक विशेषण लगाना पड़ता है, 'अखण्ड भारत', जैसे 'कोई आदमी है'। इतना कहना पूरा नहीं पड़ता, 'जिंदा आदमी है' यह कहना पड़ता है। आदमी कहते हैं तो वह जिंदा आदमी है, लेकिन बताना पड़ता है कि वह जिंदा आदमी है। वैसे ही भारत कहने के बाद 'अखण्ड भारत'। दूसरा शब्द है 'खण्डित भारत'। सामान्य लोगों की समझ में आए, इसलिए हम इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग करते हैं, लेकिन हमको समझना चाहिए कि भारत के विखण्डन की बात वही मान सकते हैं जो भारत को मात्र एक भौगोलिक इकाई मानते हैं। भारत एक भौगोलिक इकाई मात्र नहीं है, प्रकृति ने इसको ऐसा बना दिया है। कुछ भौगोलिक घटना न जाने कितने युगों पहले हुई होगी, जब दो ज्योग्रोफीकल प्लेट्स टकराईं और उसमें जिसे आज इंडो-इस्राइली प्लेट्स कहते हैं, वह यही है। वेदों में उसका वर्णन है कि हिमालय अपनी दोनों बाहु फैलाकर सारे भूमंडल को अपने स्नेहपाश में बांध रहा है यानि हिमालय के दोनों ओर पूर्व और पश्चिम जाएंगे तो उसकी भुजाएं दूर जाकर दक्षिण में मुड़ती हैं और सागर को स्पर्श करती हैं, वहां तक की भूमि। यह पुराना जमाना था, यातायात के वे साधन नहीं थे जो आज हैं और इसलिए हिमालय के कारण दुनिया से अलग-थलग बना। केवल अलग-थलग ही नहीं बना, अपितु सारी रचना ने उसके वायुमंडल को बहुत ही सृजनशील बनाया। जमीन उपजाऊ बनी, शीतल वातावरण, हर प्रकार की खुशी, हर प्रकार के धन-धान्य सबके लिए पर्याप्त, इसलिए यहां के निवासियों का स्वभाव बना, मनुष्य जीवन की धारणा करने वाले शांति-अहिंसा आदि सब तत्त्वों को मानने वाला। चारों तरफ हिमालय और सागर की सुरक्षा, अंदर कोई आक्रामक आने वाला नहीं, इसलिए अंदर जितने लोग हैं उनके लिए सब कुछ पर्याप्त है। भूलचूक से कोई आ जाता है तो उसके लिए क्या नीति है? आ गया है, उसे बचाओ और हमारे साथ रहो, तुम्हारे सुख-दुःख, हमारे सुख-दुःख, हम मिलकर रह सकते हैं। भू-भाग कुछ ऐसा बना कि तरह-तरह का वायुमंडल एक ही देश में है। मुम्बई में आज पंखा लगाकर सोना पड़ता है और यहां हीटर लगा कर सोना पड़ता है जबकि समय और देश एक ही है।

कितना विस्तृत लंबा-चौड़ा देश है और इतना प्राचीन है कि खानपान, रीतिरिवाज, भाषा सब अलग-अलग। समय और भूमि का अंतर भाषा और खानपान, रीतिरिवाज को धीरे-धीरे बदल देता है। जैसे-जैसे भूमि की उपज बदलती है, वैसे-वैसे खान-पान की आदतें बदलती हैं तो सब प्रकार की भाषाएं, देवी-देवता, रीतिरिवाज इनको साथ में लेकर चलने वाला, विविधता में एकता देखने वाला, सारी दुनिया को अपना मानने वाला, दुनियां में जितनी भी भिन्नता हो सकती है, सभी मिलकर एक साथ रह सकते हैं, ऐसा मानने वाला अहिंसक स्वभाव हमारा बना।

अब आप कल्पना करो, यही बात अरबस्तान के रेगिस्तान में कैसी हुई? वहां खाने को कुछ नहीं मिलता, जो भी मिलेगा या तो मांगकर मिलेगा या लूटकर मिलेगा, जमीन से तो मिलेगा नहीं। अगर मांगना है तो बहुत अच्छा मेहनती और सेवाभावी होना होगा। लूटना है तो शस्त्र में निपुण हों, सदा सावधान बनो। क्योंकि लूटना है तो यहीं बात खत्म नहीं होती, अन्य लूटने वालों से भी खतरा होता है। अच्छे-बुरे की बात नहीं है, जैसी भूमि है, उनको वैसा जीवन मिला। इसलिए सदा तैयार रहने वाला सैनिक स्वभाव, जब तक अपनी संख्या कम है, नम्रता से सब काम ठीक करना और एक विशिष्ट परिमाण से ज्यादा होने के बाद सर्वत्र उपद्रव शुरू होता है। इस प्रकार की परम्परा जो आज दिखती है, यह स्वभाव भूमि से आया। भूमि से कोई ज्यादा लेता नहीं? जो कुछ मिलता है वह मांग कर लूटकर या व्यापार से, इसलिए जलमार्ग से, थलमार्ग से, सफल सारथी स्वभाव के लोग बने। दूसरे देश में व्यापार करना और यदि वहां के व्यापारी अधिक कुशल हैं तो व्यापार में जीतने के लिए छल-कपट करना। कोई इसमें परहेज नहीं। इसलिए व्यापारी छल-कपट स्वभाव बाला बना। यह स्वभाव किसकी देन है? यह स्वभाव जमीन की देन है।

हम लोगों का स्वभाव हमारी भूमि के कारण है। हम कहते हैं भारत माता, वास्तव में वह हमको बनाने वाली है, सब-कुछ उसका दिया हुआ है। क्या यह मात्र एक भौगोलिक इकाई है? यह प्रॉपर्टी नहीं हो सकती। बाप-दादाओं की प्रॉपर्टी है तो कठिनाई के वक्त में बेच कर खा ली या फिर किसी को दान में दे दी। थोड़ा भाग किराये पर दे कर किसी और को रख लिया, ये सारी बातें हो सकती हैं। हमारे लिए भारत जमीन का टुकड़ा नहीं है। हमारे लिए यह माता है और यह केवल तर्क की बात नहीं है। हमारे यहां महापुरुषों की परम्परा है और आज भी ऐसे लोग हैं जो इसको अपने साक्षात् अनुभव के रूप में देखते हैं, अनुभव करते हैं। यह जीता-जागता राष्ट्रपुरुष है। स्वामी रामतीर्थ कहते थे, ''जब मैं चलता हूँ तो भारत चलता है।'' वह अपने शरीर के अंगों में भारत के अंगों का अनुभव करते थे। जिस दिन से भारत का विभाजन हुआ उस दिन से पं. पूजनीय श्री गुरुजी गोलवलकर के दोनों कंधों में जो वेदना शुरु हुई वह आखिर तक कायम रही। यह कोई संयोग नहीं है कि वह कंधे का दर्द १५ अगस्त, १९४७ से शुरू हो और अन्त तक कायम रहे। यह कोई जादू-टोना भी नहीं है। मातृभूमि से जो मन का तादात्म्य हुआ, इसके चिन्मय चेतनस्वरूप का अनुभव होने के नाते उसका दु:ख बन जाता है। भारत का विभाजन कैसे हो सकता है? मुझे तो यही

कहना है कि गुंडागर्दी के आधार पर और हमारी नादानी के चलते मातृभूमि का विभाजन हुआ है। आज के कार्यक्रम की स्मारिका में लेख है ''भारत विभाजन का कारण – मुस्लिम मानसिकता'' इस दृष्टिकोण से ठीक ही है। जिस प्रकार वे अपनी चालें चलते चले गए और जिस प्रकार वे अपने-आप को अलग मानकर इस देश में रहते थे, वही कारण था। लेकिन मुझे लगता है कि हमको तो यही सोचना चाहिए कि भारत विभाजन का कारण हिन्दुओं की कमजोरी है। आज हम पर जो आक्रमण हो रहे हैं ये कोई आज के आक्रमण हैं क्या? हजार साल से हमारी लड़ाई चल रही है। लड़ाईयां होती रहती हैं और लड़ाइयों में जीत-हार चलती रहती है लेकिन हमने कभी हार नहीं मानी। कभी भी नहीं मानी। जीत-हार होने के बाद भी हमने लड़ाई नहीं छोड़ी। राणा प्रताप लड़ते रहे प्रतिज्ञाबद्ध होकर, और अपनी प्रतिज्ञा को अंशत: पूरा होता देखकर उनका देहान्त हुआ। हमने लड़ना नहीं छोड़ा था। हमने हार नहीं मानी थी। तो ऐसा क्या हुआ कि १५ अगस्त, १९४७ को हमने मान लिया कि हम हार गए। यह जो भारत है, काबुल-जाबुल के पश्चिम से चिनाव नदी के पूर्व तक और तिब्बत के चीन की तरफ ढलान से श्रीलंका के दक्षिण तक, वह हमारा अखंड भारत हमारी अखंड मातृभूमि है, जो चैतन्यमयी है। उसका सौदा नहीं हो सकता। उसका बंटवारा नहीं हो सकता। इस बात को हमने छोड़ क्यों दिया? शांति के लिए? शान्ति के लिए विभाजन स्वीकार किया और उस विभाजन के कारण बेहिसाब हिंसा हुई। अगर हम विभाजन नहीं होने देते तो उससे जो खून-खराबा होता उस से कई हजार गुणा ज्यादा हिंसा विभाजन के कारण हुई। उसके बाद चार लड़ाईयां हुईं और अभी तक तकरार चल रही है। दांव पर दांव चल रहे हैं। तथाकथित खंडित भारत में भी हिन्दुओं और मुसलमानों के मन में परस्पर अविश्वास बना है, बना रहेगा। विभाजन किसी समस्या का उत्तर नहीं होता। क्यों हमारा दम टूट गया? आजादी की लड़ाई लड़ने वाले अपने नेताओं ने अपना दम बीच में क्यों छोड़ दिया? कारण यही कि राष्ट्र जीवन की स्पष्ट कल्पना नहीं थी।

वास्तविकता में क्या है? १८७६ में अफगानिस्तान भारत से अलग हुआ। १८७६ से २०१० तक अफगानिस्तान का इतिहास देखिए। क्या अफगानिस्तान तब से आज तक सुखी रह सका है? नहीं है। उससे पहले था। १८७६ से आज तक अफगानिस्तान में सदैव संघर्ष है। कोई भी अंग लीजिए, जो भारत से अलग हुए आज उनकी हालत खराब है। अफगानिस्तान, पाकिस्तान, बंगला देश, तिब्बत, ब्रह्मदेश, नेपाल, श्रीलंका, क्या ये सब सुखी हैं? जीवन्त शरीर की उंगलियां अगर अलग होती हैं तो उंगलियों का क्या होता है? वे मर जाती हैं, सड़ जाती हैं, कीड़े पड़ जाते हैं। शरीर में भी अपूर्णता आती है ओर वह अपंग हो जाता है। फिर भी वह जी लेता है, जैसे भारत जी रहा है। जो भारत से कटा, उसका यही हाल है।

भारत का अंग भारत से क्यों कटता है? इसलिए कि हिन्दू भाव से हटता है। बाकी कई कारण होंगे। कई प्रकार का इतिहास उस समय घटा होगा, लेकिन एक बात समान है, ***हिन्दू भाव को***

जब-जब भूलें, आई विपद् महान्, भाई टूटे धरती खोई, मिटे धर्म संस्थान। अपने आप को हिन्दू कहलाने वालों की जनसंख्या कम हुई या हिन्दू कहलाने वालों में हिन्दुत्व के बारे में जागृति कम हुई। जात-पात में बंट गए। आपस में झगड़ने लगे और फिर चौहान और मराठों के झगड़े में गौरी ने बाजी जीत ली।

''भाई टूटे, धरती खोई, मिटे धर्म संस्थान'' यह दर्दनाक इतिहास हम क्यों देखते है? हिन्दू भाव को भूलते हैं तब देखते हैं और यह हिन्दू भाव क्या है? हिन्दू भाव है ''विविधता में एकता''। आपका भगवान अलग होगा, आपकी भाषा अलग होगी, रीति-रिवाज, खान-पान अलग होगा। हो सकता है आप कहीं से चलकर आज यहां बस गए होंगे, फिर भी हम लोग साथ-साथ रह सकते हैं, क्योंकि एक ही सत्य का वर्णन हम लोग अपने तरीके से अलग-अलग करते हैं। आपके सत्य का मैं सम्मान करता हूँ। मेरे सत्य पर मैं अटल रहता हूँ। आप भी मेरे सत्य का उतना ही सम्मान करो और अपने सत्य पर अटल रहो। झगड़ा किस बात का? तुम्हारी श्रद्धा तुम्हारे लिए, मेरी श्रद्धा मेरे लिए। दोनों एक-दूसरे की श्रद्धा का पूर्ण सम्मान करते हैं। देश के नाते, समाज के नाते हम सब लोग मिलकर रहते हैं। ***हिन्दुत्व कहता है कि सत्य मेरा भी है, सत्य आप का भी है। आप जहां से देखो, वहां वैसा है, मैं जहां से देखता हूँ, वहां ऐसा है। महावीर वर्धमान के बचपन की बात है। राजमहल था। उनके मित्र उनको मिलने के लिए गए। वर्धमान के पिता जी मुख्यद्वार पर मिले। नीचे उनका दरबार लगता था। राजा से पूछा कि वर्धमान कहां हैं? राजा ने कहा कि ऊपर जाकर देखो। ऊपर चले गए, कुछ ज्यादा ही ऊपर गए। तीसरी मंजिल पर पहुंचे। वहां रसोई थी। माता जी भोजन बना रही थी। माता जी से पूछा कि वर्धमान कहां हैं? उसने कहा कि नीचे जाकर देखो। मित्रों ने कहा कि यह अच्छी बात है। पिता जी कह रहे हैं कि वह ऊपर है और आप कह रही हैं कि वह नीचे है तो सत्य क्या है? माता जी ने कहा कि सत्य दोनों हैं। वे बोले कि ऐसे कैसे — ऊपर है, नीचे है यह तो विरुद्ध हो गया। माता जी ने कहा, ऊपर नीचे के बीच में एक मंजिल और है। वहां जाकर देखो। यह हमारा देखने का दृष्टिकोण है। जहां से तुमको जो दिखता है वह ठीक है। उस पर अपनी श्रद्धा रखो और विश्वास करो और आगे जाने का प्रयास करो। मैं भी वैसे ही मेरी श्रद्धा को लेकर करता हूँ। आपस में झगड़ा करने की जरूरत क्या है?*** सृष्टि व पृथ्वी के बारे में यह धारणा है कि यहां सब की आवश्यकता के लिए पर्याप्त है, किन्तु किसी एक का भी लोभ इस सृष्टि से पूर्ण नहीं हो सकता। एक महात्मा जी कहते थे — There is sufficient for everybody's need but cannot satisfy even one's greed. और इसलिए सृष्टि का दोहन न करो। ज्यादा के लालच में सृष्टि को बरबाद मत करो। ज़र और जमीन के झगड़े यहीं से तो शुरू होते हैं। ज्यादा चाहिए इसलिए जमीन चाहिए। ज्यादा चाहिए इसलिए ज़र चाहिए। ज़र जमीन जंगलों को लेकर झगड़े होते हैं। तीसरी बात है कि जीवन चलता रहता है। जो यह जन्म मिला है यही सब कुछ नहीं, आगे भी है। आगे का सुधारने के लिए अभी अच्छे रहो। पीछे का जो है, उसे

भुगतना पड़ेगा। आगे भुगतना न पड़े, इसलिए अच्छे रहो। जीवन में केवल भोग को ही प्राप्त नहीं करना है। जीवन में सत्य को प्राप्त करना है। इसलिए भोग को पर्याप्त मत मानो। यह सारा दृष्टिकोण हिन्दुत्व है। इस भाव को भूलने से क्या होता है? जिनको यह भाव मालूम नहीं था, उनके सामने हमने घुटने टेक दिए। जो अपनी भौतिक सुख-लालसा को पूर्ण करने के लिए दुनिया के जमीन जंगल और स्त्री धन पर काबू करना चाहते थे ऐसे लोगों के सामने हम झुक गए। क्यों झुक गए? हमने उनका कहना कैसे मान लिया? क्योंकि हम मुसलमान हैं, हम आपके साथ रह नहीं सकते? हमें अपना अलग देश चाहिए, इसको हमने क्यों माना? इस को मानने की क्या आवश्यकता थी? अगर हमने माना तो शेष भारत में हमने उसको चालू क्यों रखा? यह तर्क नहीं है कि हम थक गए थे। जनता की नहीं, लड़ने वाले हमारे सेनानियों की हिम्मत पस्त हो गई। यह खंडित भारत हमारी दुर्बलता का परिणाम है। हमने उन लोगों का कहना कैसे मान लिया जो यह कहते थे हमारा ही सही है, बाकी सब गलत हैं। एक होने के लिए एकरूपता आवश्यक है। विविधता में एकता नहीं चलती। हमने कैसे इसको मान लिया? इस जीवन का उपभोग ही सब कुछ है और उसके लिए चाहे जो करो, भूमि को जीतो, दूसरों की महिलाओं का अपमान करो। ऐसा जिनका आचरण है ऐसे लोगों के सामने सिर क्यों झुकाया? उनके हाथों में हमने अपने पश्चिम व पूर्व के भाइयों को कैसे दे दिया? उस समय डॉ. अम्बेडकर कह रहे थे कि यदि आपको देश का बंटवारा करना ही है तो पहले हिन्दुस्तान में सब हिन्दुओं को इधर ले आओ और यहां के सब मुसलमानों को उधर भेजो बाद में बटवारा करो, नहीं तो खून खराबा होगा। हमने नहीं माना और खून खराबा हुआ। हमने नहीं माना क्यों नहीं माना? हम इस बात से आगे झुक गए थे कि जीवन के उपभोग के लिए दुनिया में यह सब करना है। हमने यह मूर्खता क्यों की और अगर हम इसको नहीं मानते तो फिर झुके क्यों? भारत का विखंडन हमारी दुर्बलता का परिणाम है। वह बेहद दुखकारी परिणाम है। आज दुनिया को किन बातों की आवश्यकता है? आज दुनिया क्या चाहती है? दुनिया साफ-साफ चिल्ला रही है, दुनिया के चिंतक लोग बता रहे हैं। सारी सृष्टि को समग्रता में देखना है। मेरा स्वार्थ और पेड़-पौधों का स्वार्थ अलग-अलग नहीं है। हम एक-दूसरे से जुड़े हैं। इसलिए Wholistic approach चाहिए। अपने सुख के लिए सृष्टि की संचित ऊर्जा का दोहन मत करो, जो प्रवाही ऊर्जा है, उससे लो और उसमें वापिस करो। उपभोग पर नियन्त्रण करो। संयम का वरण करो। सृष्टि विविध प्रकार की है। उसको एक ही गणवेश में ठूंसने की आकांक्षा मत रखो। सर्वपंथों में समभाव चाहिए, समादर चाहिए। यह सब आधुनिक चिंतक बताने लगे हैं। दुनिया को हिन्दुत्व की आवश्यकता है। कितना रुकना पड़ा हमको इस परिस्थिति को देखने के लिए, कितना रुकना पड़ा? उस समय आपने थककर अपना दम छोड़ दिया और भावताव में जितना मनवा सकते थे उतना ले लिया, अगले साठ साल लड़ने का हमारा दम रहता तो क्या होता? साठ साल की जरूरत नहीं थी। पूजनीय श्री गुरुजी ने गांधी जी को बताया था कि छः महीना आप कुछ मत करिए — छ महीना 'हां' मत करिए। बाकी हम देख लेंगे।

छ: महीने की बात थी। छ: महीने के लिए हमने अपना दम छोड़ दिया। उसका ही यह परिणाम है। भारत के कटे सभी अंग स्वयं भी दु:ख में जी रहे हैं और भारत के लिए भी सिरदर्द बने हैं। पूरा भारत वास्तविकता है। एक जगह फसल होती है और उस फसल का उत्पाद बनाने के लिए दूसरी जगह जाना पड़ता है। जैसे बंगला देश में जूट, और जूट वस्त्र बनाने वाले कारखाने सारे भारत की तरफ। ऐसा हर भाग के बारे में है। सब तरह की गुण सम्पदा भारत के लोगों के पास है। अच्छे व्यापारी भारत के पास हैं। अच्छे विद्वान भारत के पास हैं। अच्छे योद्धा भारत के पास हैं। सब प्रकार के लोग भारत के पास हैं। भारत के पास हैं यानि पूरे भारत को मिला कर सब प्रकार के लोग हैं। यह जीवन्त इकाई है। भौगोलिक चित्र से एक बात ध्यान में आती है। विविधता को सहन करने की ताकत, हिमालय के दक्षिण में हिमालय की चार दीवारी के अन्दर, सागर तक बहुत अच्छी है, बहुत ज्यादा है। समझदारी है, इन्सानियत है। लेकिन जहां पर ऊपर से बाहर का तंत्र थोपा गया है वहां क्रूरता का नंगा नाच आज भी देखने को मिलता है। यह असह्य हो चला है। दुनिया की ऐसी जो कट्टरपंथी ताकतें हैं जो दुनिया को भेद की नज़रों से देखती हैं या जिनको भारत की इस मानवता का डर है। वास्तव में यह मानवता है — नाम इसको हिन्दुत्व मिला है। सब मानवों के लिए है, सृष्टि के सम्पूर्ण जीवन के लिए है, सृष्टि के समग्र जीवन की धारणा करने वाला। व्यक्ति, समाज, सृष्टि इनको साथ चलाकर भगवान की ओर अग्रसर करने वाला, लोगों की कामनाओं की पूर्ति करने के लिए पर्याप्त अर्थ का सृजन करते हुए उनको समाज को टिकाने के धर्म का संतुलन कर मोक्ष की ओर बढ़ाने वाला, यह जो संतुलन है, यह जो मानवता है यही हिन्दुत्व है। यही भारतीयता है, यही भारत की अखण्डता है। लेकिन लोगों को डर लगता है कि यह अगर हो गया तो हमारी कट्टरपंथी दुकान कैसे चलेगी? हमारा सारी दुनिया पर डंका कैसे चलेगा? हमारी थोड़ी जनसंख्या के लिए, अधिक जल संसाधन और अधिक बाजार हमको हमारी मुट्ठी में चाहिए वह कैसे होगा? नहीं होगा, इसलिए हिन्दुत्व को मत पनपने दो। इसीलिए अखंड भारत का विरोध, इसीलिए हिन्दुत्व का विरोध होता है, इसलिए भारतीयता का भी विरोध होता है। तीनों बातें चल रही हैं।

अब देखिए, कल इक्कतीस है और परसों एक जनवरी है। दूरदर्शन पर और समाज में भी विशेषकर जो उच्च शिक्षित अंग्रेजी शिक्षित वर्ग है उसमें आपको जो दृश्य दिखेगा, वह भारत का दृश्य नहीं है। वह यूरोप का दृश्य है। भारत के दृश्य को थोड़ा नीचा मानने वाला, थोड़ा हीन मानने वाला भारत में एक इंडिया है। आज अच्छे-अच्छे सोचने वाले लोग कहते हैं कि भारत को चलाने वाला इंडिया है। मैं कहता हूँ कि कभी भारत को अंग्रेज चलाता था। उसके ध्यान में आया कि अंग्रेज नाम रखकर इसको चलाना संभव नहीं है तो उसने बहुत पहले योजना बनाकर यहां काले रंग के अंग्रेज को इंडिया नाम से बिठा दिया। वह चला रहा है सबसे पहला भारत विभाजन १८६० में मैकाले व मैक्समूलर की योजना के लागू होते हुआ। जिस दिन अपने इतिहास का एक पहला पाठ हमने भूला और जिस दिन हमने अपनी भाषा को अंग्रेजी भाषा से एक डिग्री नीचे समझा, उस दिन

से भारत का विभाजन शुरू हुआ क्योंकि भारत का विभाजन मात्र भूमि का विभाजन नहीं है। भारत का विभाजन मन का विभाजन है। यह हमारा मनोभंग है, तेजो भंग है। यह भारत की आभा का विभाजन है और इसलिए इसे वापिस होना ही पड़ेगा। 'टूटा हुआ घर खड़ा नही रह सकता', इब्राहिम लिंकन ने कहा है, यहां तो तोड़ के अलग करके रख दिया है और उसके एक होने के मार्ग में कई प्रकार की बाधाएं खड़ी कर दी हैं। लेकिन यह सत्य है जो सिर पर चढ़कर बोलता है। हम भारत के लोग कहना नहीं चाहते हैं। जो कल भारत के थे और जिन को अलग-अलग नामों से जाना जाता है, वे भी यह कहते हैं। ***१९९२ में ढांचा गिरा तो सारे देश में दंगे हुए और कई कार्यक्रम रद्द करने पड़े। उनमें एक कार्यक्रम था, सार्क देशों के अध्यक्ष की अगली पारी के लिए श्रीलंका के प्रेमदासा अध्यक्ष बनने वाले थे। उन्होंने सिंहासन पर चढ़ना और शायद खालिदा जिया को उतरना था।*** **Charge taking ceremony** ***होने वाली थी। भारत में वह रद्द हो गया और वह छ: महीने बाद ढाका में हुआ। मैं संघ का प्रचारक था और ढांचा गिरने के बाद प्रतिबन्ध लगा था। शाखाएं चलाना नहीं, दूसरा कुछ चलाना नहीं तो थोड़ी फुर्सत रहती थी। इसलिए एक दिन के लिए घर पर गया था। धर के सब लोग अपने काम में लगे थे। मैं अकेला था जिसे घर में कुछ काम नही था। टी.वी. लगाया तो संयोग से वह समारोह चल रहा था जहां प्रेमदासा अध्यक्ष बनने वाले थे। प्रेमदासा का भाषण सुना। यह कार्यक्रम हमें छ: महीने आगे करना पड़ा, यह अच्छी बात नहीं हुई। देखो भाई, इतना बड़ा समाज है सार्क के देशों का। इतने सारे देश हैं और इतनी सारी विविधताएं हैं। इसमें कभी-कभी झगड़ा भी हो सकता है और झगड़े में ये सारी बातें होती ही रहती हैं। उसके चलते अपनी जनता में इतना क्षोभ कि कार्यक्रम आगे करना पड़े। हमें अपनी-अपनी जनता को समझाना चाहिए कि यह कोई झगड़ा करने लायक बात नहीं है। फिर उन्होंने कहा कि हमको अब एक ही रहना चाहिए क्योंकि दुनिया की महाशक्तियां छोटे-छोटे देशों को निगलने की फिराक में हैं। हम दक्षिणपूर्व एशिया के सब लोग हैं। हम एक-दूसरे के पड़ोसी तो हैं ही। लेकिन आप जानते हैं कि यद्यपि आज दुनिया में हम देशों के नाम अलग हैं? हमारा मूल तो एक ही मुख्यत: भारत भूमि है। यह प्रेमदासा कह रहे हैं। चार सौ साल पहले बंगाल के किनारे से कोई राजपुत्र श्रीलंका नहीं भेजा जाता तो आज श्रीलंका कहा होता? आज होता ही नहीं। भारत के कारण हमारा अस्तित्व है, आज हम अलग-अलग हैं किन्तु मूल में हम एक हैं इसे हम को भूलना नहीं चाहिए। ऐसा प्रेमदासा कह रहे थे।*** इनको मालूम है कि पाकिस्तान एक अलग देश है। १९७२ में बंगला देश एक अलग देश बन गया है। लेकिन वह याद दिला रहे थे कि हम एक थे। यह हमें कभी भूलना नहीं चाहिए। जिए सिन्ध आन्दोलन के लोग भारत में आकर बोलकर गए कि भारत का विभाजन सबसे बड़ी गलती थी। दक्षिणपूर्व एशिया की सुरक्षा के लिए और दुनिया की भलाई के लिए भी भारत का एक होना आवश्यक है। यह जो खंडित भारत का दु:स्वप्न हम देख रहे हैं, प्रकृति-विरुद्ध तर्क-विरुद्ध, चीजों को मान कर चल रहे

हैं। भारत माता है, उसका विभाजन नहीं हो सकता। हम सिखा रहे हैं कि यह नहीं मानना पड़ेगा कि Pakistan is a settled fact. अरे! हमारा काम है उस Settled fact को unsettled करना। भारत माता के पुत्र के नाते यह हमारा कर्त्तव्य बनता है। लेकिन हम Settled fact को मानने का आग्रह सिखा रहे हैं। प्रकृति के विरुद्ध बातों को लेकर हम चल रहे हैं, उसके फल भुगत रहे हैं। एक बार हम जागें। इस दु:स्वप्न को तोड़कर आगे हम सत्य सृष्टि में आंखें खोलकर देखें तो सत्य स्वत: हमारे सामने है। अखंड भारत सत्य है। उससे सब का कल्याण है। भारत की सीमा सुरक्षा पर, पाकिस्तान, ब्रह्मदेश, तिब्बत सब की सीमा सुरक्षा पर जो बड़ा खर्चा होता है, वह सारा बच जाएगा और लोगों के विकास पर लग जाएगा। फिर जो सीमा बनेगी वह प्राकृतिक दृष्टि से इतनी सुरक्षित है कि उसको अधिक अभेद्य सुरक्षित बनाने के लिए बहुत ज्यादा प्रयास नहीं करना पड़ेगा। जितना सारा पानी इस भू-भाग के लिए बर्फ में तैयार होता है, सब का सब अपनी ही भूमि में रहेगा। आज चीन तिब्बत से ले जा रहा है क्योंकि तिब्बत उसके पास है। यह रचना ऐसी बनी है। यहां का पानी यहां के लोगों को पोषित करके फिर दुनिया का कल्याण करता है। कितनी ही ऐसी बातें हैं। ***भारत की भलाई के लिए, दक्षिण पूर्व एशिया की भलाई के लिए और सारी दुनिया की भलाई के लिए अखंड भारत की स्थापना होना आवश्यक है।*** लेकिन कब होगा? उसकी दो शर्तें हैं, क्यों टूटा? हिन्दुओं की दुर्बलता के कारण टूटा। हां, यह बात है कि हिन्दुओं की दुर्बलता के चलते अलगाववादी मनोवृत्तियां पूर्वगत एक हजार साल से मौजूद थीं, लेकिन वे कुछ नहीं कर पाईं। जिस दिन हम हिन्दू दुर्बल हुए उस दिन वे सफल हुए और इसलिए पहली बात है हिन्दुओं को संख्यात्मक दृष्टि और गुणात्मक दृष्टि से दुर्बल नहीं रहना चाहिए। हिन्दू का दुर्बल होना यानि अपने भारतवर्ष का घात होना। यहां पर हिन्दुकुश पर्वत के उस पार से या तिब्बत के पठार के उस पार से या चिन्हवत नदी के उस पार से जो एकाधिकारवादी आसुरी मनोवृत्तियां हैं उनके आक्रमण का रास्ता बनता है तो हिन्दू को तो सुदृढ़ होकर खड़ा होना ही होगा। स्वाभिमानपूर्वक अखंड भारत का पुजारी बनकर चलने वाला, आभायुक्त अपनी अखंड भूमि की निष्काम सेवा में जो समर्पित है, वह हिन्दू है। ऐसा अच्छा, पक्का, सच्चा हिन्दू बनकर आपस में भेद और स्वार्थों को भूलकर सब हिन्दुओं को सशक्त खड़ा होना चाहिए। हिन्दू का व्यापक अर्थ ध्यान में रखना चाहिए। पंथ सम्प्रदाय अनेक हैं, खानपान, रीति-रिवाज अनेक हैं, भाषाएं अनेक हैं। पहली बात यह कि चेतन्यमयी मातृ भू की अखंड रूप की मन में उपासना करने वाली, भारतमाता को अपनी माता मानने वाली, विविधता में एकता के सूत्र को पुष्ट करने वाली, उस एकता का प्रत्यक्ष साक्षात्कार कराने के अनेक मार्ग देने वाली, यह अपनी भारतीय संस्कृति है। उस संस्कृति में अपना जीवन जीने वाला और इस देश के, समाज के, संस्कृति के, धर्म के, विकास में जिन अपने पूर्वजों ने अपना खून-पसीना बहाया, वे हम सबके पूर्वज समान हैं। चालीस हजार वर्ष पूर्व से भारतवर्ष के काबुल-जाबुल के पश्चिम चिन्ह पूर्व तक और तिब्बत से चीन की तरफ की ढलान से श्रीलंका के

दक्षिण तक इस भू-भाग पर रहने वाले लोगों का D.N.A. चालीस हजार वर्षों से समान पूर्वजों के वंशजों का D.N.A. है। यह विज्ञान कहता है। अपने समान पूर्वजों का गौरव हम अपने मन में धारण करते हैं। कुछ लोग भगवान मान कर उनकी पूजा करते हैं, कुछ लोग उनको भगवान नहीं मानते हैं। ठीक है, लेकिन वे हमारे पूर्वज हैं, उनके आदर्शों पर हम अपने जीवन का उदाहरण तैयार कर रहे हैं। उनके बारे में हमारे मन में समादर भाव हैं, हमारे महापुरुष तो हैं ही, यह मानने वाले लोग हिन्दू बनकर खड़े हो जाएं। इसमें किसी का विरोध नहीं, किसी के प्रति प्रतिक्रिया नहीं। यह दुनिया के कल्याण के लिए आवश्यक है। दूसरी बात है कि ऐसे हिन्दुओं को अपना लक्ष्य रखना चाहिए। स्वाभाविक रूप से यह होता है। १९४८ में चीन ने अपने उदय के साथ निश्चित किया कि जिन भू-भागों को हम चीन का मानते हैं उन सबको हम वापिस लायेंगे। अपना एक विजिन तैयार किया, अपनी एक दृष्टि तैयार की, उसके आधार पर अपनी नीति तैयार की और उस पर वह चल रहा है। आज हमारे अरुणाचल पर भी इसलिए दावा बोलता है। स्वभाव तो साम्राज्यवादी है ही। बंगला देश ने अपने उदय के साथ सिद्ध किया कि हमारी जनसंख्या बहुत ज्यादा है, उपजाऊ भूमि हमारे पास कम है। भूमि विस्तार हमारे देश का पहला कर्त्तव्य, तो पास वाले आसाम को बंगला देश का अंग बनाना, यह हमारी अन्तर्राष्ट्रीय नीति का लक्ष्य होना चाहिए। वह अपने प्रयास कर रहा है। इस खंडित भारत के असत्य को भूलकर अखंड भारत के सत्य की पुनर्प्रतिष्ठा स्थापित करने के लिए हम अपनी नीति नहीं बना सकते? बनानी चाहिए। उल्टा हो रहा है। इन बातों को भूलते हैं तो फिर कश्मीर का प्रश्न खड़ा होता है। इन बातों को भूलते हैं तो जात-पात के झगड़े खड़े हो जाते हैं। आरक्षण को लेकर जीना दुर्लभ हो जाता है। कोई भी लोक कल्याण के लिए नीति चलती है तो उसका निजी स्वार्थ साधने के लिए उपयोग हो जाता है। सब प्रकार का भ्रष्टाचार होता है, क्योंकि अपने देश के साथ एकात्म भावना नहीं है। उस एकात्म भावना को लेकर अपने राष्ट्र की सम्पूर्ण रूपरेखा अपनी आंखों के सामने स्पष्ट हो, और डंके की चोट पर हम उसको मानें और कहें, क्योंकि तब तक एकता आ नहीं सकती। अलग-अलग देवताओं की उपासना करने वाले लोग भारत में हैं। वे अगर यह मानते रहे कि मेरा ही सब सत्य है वाकियों का सब गलत है और दुनिया में सिर्फ मुझे ही भगवान मिलेगा और बाकी सब लोग मेरे नीचे रहेंगे और वाकी सब बातों पर मेरा ही अधिकार है, मेरी मानेंगे तो ठीक है नहीं तो मैं उनको भाड़ में डाल सकता हूँ, ऐसा मानकर चलेंगे तो नहीं चलेगा। फिर तो पाकिस्तान और भारत एक हो गए तो हिन्दुओं पर बड़ा संकट हो जाएगा। ऐसे विकृत विचारों वाले लोग एक होंगे भी नहीं। उनको एक करने वाला विचार हिन्दुत्व का ही है। हम सब एक हैं, भारत माता के पुत्र हैं। राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, गुरुओं के वंशज हैं, बाबर के नहीं हैं। हमारी संस्कृति हिन्दू समाज के नाते। किसी की पहचान को इसमें खतरा नहीं है। सब की पहचानें विकसित होंगी, फिर भी एक पहचान में सब आयेंगे। विविधताओं को समाप्त करके एकता नहीं लानी। इस बात को, विचार को सब लोग मानेंगे। नेपाल के अपने आप

को हिन्दू कहलाने वाले, सब लोग मानेंगे। तब भारत अखंड बनेगा। ऐसा भाव वहां पर निर्माण हो और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति ऐसी बदले कि आप सब लोगों को एक होना पड़े, इस भाव का वरण करें। इस दिशा में अपनी सब प्रकार की नीतियों को चलाना। स्वयं सच्चे हिन्दू, अच्छे हिन्दू बनकर संगठित होना। इससे पहले और बाद तक तीसरी बात तो मैंने कही ही थी। यह सारा प्रत्यक्ष साकार होने तक और उसके बाद भी अखंड भारत के सत्य को भूलना नहीं Pakistan is not a settled fact. Settled fact वह होता है जिसको भगवान ने बनाया है। जब तक हमारे बाजुओं में बल है तब तक वह बात Settled है जिसको भगवान ने बनाया है। भगवान जब तक उसको तोड़ते नहीं तब तक एक रहती है। भारतवर्ष का स्रष्टा ईश्वर है। विविधता में एकता पूर्ण मानव जीवन का उदाहरण उसने दुनिया के सामने रखा है और इसलिए वह सदा रहेगा। वह सत्य है। सनातन सत्य है Eternal Truth है। उसको भूलने से काम नहीं चलेगा। सत्य से मुंह मोड़ के चलते हैं तो फिर झटके खाने पड़ते हैं। फिर दुर्दशा भुगतनी पड़ती है। एक सत्य से हमने मुख मोड़ लिया। गुंडागर्दी के आगे घुटने टेककर विभाजन स्वीकार कभी नहीं करना, इस सत्य को हम भूल गए। खून खराबे के भय से असत्य को मान लिया। अब जो हो रहा है, उसे पिछले साठ साल से देख रहे हैं। सत्य की धर्म भूमि पर आरूढ़ होकर निर्भय रूप से भारतमाता की जय का उद्घोष करते हुए हिन्दू समाज जीने लगे और सम्पूर्ण अखंड भारत के भू-भागों में और समाजों में इस प्रकार की भूमिका बने तो अखंड भारत का सत्य अवतरित होगा। भारत के लिए वह अच्छा होगा ही, दक्षिण-पूर्व एशिया के लिए और सम्पूर्ण दुनिया के लिए भी अच्छा होगा और आगे मनुष्यता का जीवन निर्बाध चले, इसके लिए दूसरा रास्ता नहीं है। इस अखंड भारत की बात आज प्रत्येक भारतवासी का कर्त्तव्य हो गया है। अपना कर्त्तव्य पालन कर, सोच समझकर जानबूझकर आगे बढ़ने का उद्योग हम सब का जितना जल्दी शुरू होगा, उतना जल्दी अच्छा होगा। बड़े आनन्द की बात है कि स्व. बाबा साहिब आपटे स्मारक समिति के द्वारा यह कार्यक्रम है। स्व. बाबा साहिब आपटे स्मारक समिति के द्वारा भारत के सत्य इतिहास को, भारत के स्पष्ट अखंड स्वरूप को सारे समाज के सामने संशोधनपूर्वक लाने का स्तुत्य कार्य चल रहा है। यह कार्य ऐसा ही चलता रहे, फले-फूले तो एक दिन अखंड भारत का सत्य सारी दुनिया के सिर पर चढ़कर बोलेगा, इसमें कोई दो राय नहीं है। हम लोगों को जल्दी से जल्दी उस परिस्थिति के लिए तैयार होना है। अपने कर्त्तव्यों को ध्यान में रखकर हम सब लोग उसका पालन करें। इतना एक अनुरोध करते हुए, स्व. बाबा साहब आपटे स्मारक समिति के सभी कार्यकर्त्ताओं का इस कार्यक्रम के आयोजन के लिए अभिनन्दन और इसमें मुझे बुलाकर बोलने का अवसर देने के लिए धन्यवाद देता हूँ।

वन्दे मातरम्।

विवेकानन्दामृतम्

स्वामी जी का शिकागो व्याख्यान

11 सितम्बर, 1893

११ सितम्बर, १८९३ विश्व धर्म महासभा में स्वामी विवेकानन्द जी ने जब अपना व्याख्यान अमेरिकावासी बहनों और भाइयों के सम्बोधन से आरम्भ किया तो सभागार में उपस्थित हजारो श्रोताओं की करतल ध्वनि बहुत देर तक गूंजती रही। सैकड़ों लोग हर्षोल्लास से उठ खड़े हुए। यह चमत्कार भारत में युगों-युगों से चले आ रहे ऋषि परम्परा के संस्कारों का प्रभाव था। स्वामी जी के व्याख्यान में विश्व समाज के लिए श्रेष्ठ मानवीय मूल्यों से सम्पूर्ण हिन्दू संस्कृति का संदेश अभिव्यक्त है। यह युगान्तरकारी पूरा व्याख्यान यहां यथावत् प्रस्तुत है। स्वामी जी ने कहा —

मेरे अमेरिकावासी बहनों और भाइयो!

आपने जिस सौहार्द और स्नेह के साथ हम लोगों का स्वागत किया है, उसके प्रति आभार प्रकट करने के निमित्त खड़े होते समय मेरा हृदय अवर्णनीय हर्ष से पूर्ण हो रहा है। संसार में सन्यासियों की सबसे प्राचीन परम्परा की ओर से मैं आपको धन्यवाद देता हूँ, धर्मों की माता की ओर से धन्यवाद देता हूँ और सभी सम्प्रदायों एवं मतों के कोटि-कोटि हिन्दुओं की ओर से धन्यवाद देता हूँ।

मैं इस मंच से बोलने वाले उन कतिपय वक्ताओं के प्रति भी धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ, जिन्होंने प्राची के प्रतिनिधियों का उल्लेख करते समय आपको यह बतलाया है कि सुदूर देशों के ये लोग सहिष्णुता का भाव विविध देशों में प्रसारित करने के गौरव का दावा कर सकते हैं। मैं एक ऐसे धर्म का अनुयायी होने में गर्व का अनुभव करता हूँ, जिसने संसार को सहिष्णुता तथा सार्वभौम स्वीकृति, दोनों की ही शिक्षा दी है। हम लोग सब धर्मों के प्रति केवल सहिष्णुता में ही विश्वास नहीं करते, वरन् समस्त धर्मों को सच्चा मानकर स्वीकार करते हैं। मुझे एक ऐसे देश के व्यक्ति होने का अभिमान है, जिसने इस पृथ्वी के समस्त धर्मों (मतों) और देशों के उत्पीड़ितों और शरणार्थियों को आश्रय दिया है। मुझे आपको यह बतलाते हुए गर्व होता है कि हमने अपने वक्ष में यहूदियों के विशुद्धतम अवशिष्ट अंश को स्थान दिया था, जिन्होंने दक्षिण भारत आकर उसी वर्ष शरण ली थी, जिस वर्ष उनका पवित्र मन्दिर रोमन जाति के अत्याचार से धूल में मिला दिया गया था। ऐसे धर्म का अनुयायी होने में मैं गर्व का अनुभव करता हूँ, जिसने महान ज़रथुष्ट्र (पारसी) जाति के अवशिष्ट अंश को शरण दी और जिसका पालन वह अब तक कर रहा है। भाइयो, मैं आप लोगों को एक स्तोत्र की कुछ पंक्तियां सुनाता हूँ, जिसकी आवृति मैं अपने बचपन से करता रहा हूँ और जिसकी आवृति प्रतिदिन लाखों मनुष्य करते हैं।

रुचिनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषाम्।
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव।।

शिवमहिम्नस्तोत्रम्।७।।

जैसे विभिन्न नदियां भिन्न-भिन्न स्रोतों से निकलकर समुद्र में मिल जाती हैं, उसी प्रकार हे प्रभो! भिन्न-भिन्न रुचि के अनुसार विभिन्न टेड़े-मेढ़े अथवा सीधे रास्ते से जाने वाले लोग अन्त में तुझमें आकर मिलते हैं।

यह सभा, जो अभी तक आयोजित सर्वश्रेष्ठ सम्मेलनों में से एक है, स्वत: ही गीता के इस अद्‌भुत उपदेश का प्रतिपादन एवं जगत् के प्रति उसकी घोषणा है।

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।।

गीता ।।४।११।।

जो कोई मेरी ओर आता है, चाहे किसी प्रकार से हो, मैं उसको प्राप्त होता हूँ। लोग भिन्न-भिन्न मार्ग द्वारा प्रयत्न करते हुए अन्त में मेरी ही ओर आते हैं।

साम्प्रदायिकता, हठधर्मिता और उनकी वीभत्स वंशधर धर्मान्धता सुन्दर पृथ्वी पर बहुत समय तक राज्य कर चुकी है। वे पृथ्वी को हिंसा से भरती रही हैं, उसको बारम्बार मानवता के रक्त से नहलाती रही हैं, सभ्यताओं को विध्वस्त करती और पूरे-पूरे देशों को निराशा के गर्त में डालती रही हैं, यदि ये वीभत्स दानवी न होतीं, तो मानव समाज आज की अवस्था से कहीं अधिक उन्नत हो गया होता। पर अब उनका समय आ गया है और मैं आन्तरिक रूप से आशा करता हूँ कि आज सुबह इस सभा के सम्मान में जो घंटा-ध्वनि हुई है, वह समस्त धर्मान्धता का, तलवार या लेखनी के द्वारा होने वाले सभी उत्पीड़नों का तथा एक ही लक्ष्य की ओर अग्रसर होने वाले मानवों की पारस्परिक कटुताओं का मृत्यु निनाद सिद्ध हो।

विवेकानन्द साहित्य, प्रथम खण्ड पृ. ३-४

संवीक्षण

पुराणों में मलय पर्वत और केरल-तमिलनाडू

डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा

पुराण प्राचीन होकर भी नया होने की क्षमता रखने वाला वाङ्मय है। यास्क ने निरुक्त (३/१९) में कहा भी है, ***पुरा नवं भवति।*** इसी प्रकार अनेकानेक व्युत्पत्तियां सिद्ध करती हैं कि भारतीय संस्कृति के अविरल, प्रवाह में पुराण की अद्वितीय भूमिका रही हैं और इसे बार-बार समझने-समझाने का प्रयास किया जाता रहा है। वायुपुराण (१/२०३) ***पुरा अनति*** अर्थात् प्राचीनकाल में जो जीवित था, उसे पुराण कहता है, तो पद्मपुराण (५/३/५३) के अनुसार, ***पुरा परम्परां वष्टि पुराणं तेन तत् स्मृतम्*** अर्थात् जो प्राचीनता अर्थात् परम्परा की कामना करता है, वह पुराण है। ब्रह्माण्डपुराण (१/१!१७३) की व्युत्पत्ति ***पुरा एतद् अभूत्*** अर्थात् प्राचीनकाल में ऐसा हुआ सिद्ध करती है कि पुराणों में निहित अनेकानेक तथ्य एवं प्रसंग पुरातन काल में घटित यथार्थ रहे हैं। यह जरूर है कि इसकी अपनी विशिष्ट कथन-भंगिमा रही है, जिसमें रहते कई बार इनके कल्पित होने का भ्रम हो जाया करता है।

पुराण और इतिहास का युग्म प्राचीन युग से चला आ रहा है। छान्दोग्योपनिषद् में नारद अपनी अधीत विद्याओं में 'इतिहास-पुराण' को पंचम वेद की संज्ञा देते हैं, ***ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमाथर्वणमितिहासपुराणं पंचमं वेदानां वेदम्।।*** (छांदोग्य ७/१) लम्बे समय तक इतिहास-पुराणं के मध्य सीमा रेखा अत्यंत सीमित थी। धीरे-धीरे दोनों में पार्थक्य स्पष्ट होने लगा। एक समय में 'इतिहास' 'पुराण' को और 'पुराण' 'इतिहास' को गतार्थ करते थे। (अथर्ववेद ११/७/२४, कौटिल्य अर्थशास्त्र १/५) बाद में आचार्य शंकर (७००ई.) जैसे मनीषी दोनों में स्पष्ट अंतर दिखाते हैं — इतिहास और पुराण दोनों ही वेद में उपलब्ध हैं। उर्वशी तथा पुरुरवा के संवाद को सूचित करने वाला ***उर्वशीहाप्सराः पुरुरवसमैडं चकमे*** आदि शतपथ ब्राह्मण (११/५/१/१) तो इतिहास है, परन्तु असद्वा इदमग्र आसीत (आरम्भ में असद् ही वर्तमान था, जिससे सृष्टि उत्पन्न हुई) इत्यादि सृष्टि-प्रक्रिया-घटित विवरण पुराण है। अर्थात् प्राचीन आख्यान तथा आख्यायिका का सूचक भाग इतिहास है तथा सृष्टि-प्रक्रिया का वर्णन पुराण है। (छांदोग्य भाष्य, ७/१) पुराण और इतिहास की यह विभाजक रेखा पुराणों के विस्तार के साथ-साथ क्रमशः समाप्त होती चली गई। यही कारण है कि दोनों पुरावृत्त को द्योतित करने लगे। आज इसी दृष्टि से पुराणों पर विचार करने के अनेक उदाहरण मौजूद हैं। चाहे भारतीय-विद्वान हों, चाहे पाश्चात्य अन्वेषक-सभी ने पुराणों में मौजूद पुरावृत्त या इतिहास को लेकर पर्याप्त कार्य किया है।

पुराणों का महत्त्व ***'इतिहास पुराणाभ्यां वेदं समुपबृहयेत्'*** या ***पूरणात् पुराणम्*** अर्थात् वेदार्थ के उपबृंहण या उसके पुराण की दृष्टि से तो है ही, उनसे प्राचीन भारतीय समाज, संस्कृति,

राजनीति, लोक-जीवन, भूगोल, आर्थिक प्रणाली आदि के इतिहास का भी बोध होता है। जिनके आधार पर भारतीय इतिहास के अनेक ज्ञात-अज्ञात पहलुओं पर प्रकाश डाला जा सकता है। भारतीय पुराणों में नंद, मौर्य, शिशुनाग, गुप्त, आंध्र आदि अनेक शासकों के युग, वंशावली और उनके योगदान का वर्णन मिलता है। उनमें युग-प्रति-युग समाज, धर्म, कला-संस्कृति, नगर-ग्राम, लोक-जीवन में आते परिवर्तनों की आहट को साफ तौर पर सुना जा सकता है। वर्तमान में पुराणों को इतिहास के महत्त्वपूर्ण स्रोत की दृष्टि से देखने की आवश्यकता बढ़ती जा रही है। उनमें उपलब्ध तथ्यों और घटनाओं की पुरातात्त्विक, ऐतिहासिक, मुद्राशास्त्रीय एवं अन्य साक्ष्यों के साथ तुलना एवं सामंजस्य के आधार पर ऐसी अनेक नवीन स्थापनाएं की जा सकती हैं, जिनके सम्बन्ध में औपचारिक इतिहास प्राय: मौन ही दिखाई देता है। पुराणों में समय-समय पर प्रक्षेप होते रहे हैं, फिर भी अन्त: साक्ष्य एवं बहिर्साक्ष्यों के आधार पर अनेक मूल रूप की पूर्व सीमा उत्तर वैदिककाल से लेकर उत्तर सीमा ईसा की चौथी-पांचवीं शती के मध्य मानना युक्तिसंगत प्रतीत होता है।

पौराणिक वाङ्मय में भारत के दक्षिणी भू-भाग से जुड़े अनेक ऐतिहासिक संदर्भ उपलब्ध हैं, जिनका सूक्ष्म अनुशीलन कर इतिहास की अनेक विस्मृत कड़ियों को खोजा जा सकता है। इसी प्रकार आर्य-द्रविड़ सभ्यता जैसे प्रश्न पर पुनर्विचार की भूमि भी पुराणों में उपलब्ध है। यहां मलय पर्वत एवं केरल-तमिलनाडू परिक्षेत्र के संदर्भ में पुराणों की ऐतिहासिकता पर विचार किया जा रहा है। समुद्र और पर्वतों से घिरे केरल को भगवान के अपने देश की स्वाभाविक संज्ञा मिली हुई है। माना जाता है कि यह परशुराम द्वारा आविष्कृत क्षेत्र हैं। प्राकृतिक सौदर्य, बहुरंगी संस्कृति और समृद्ध परम्पराओं की इस भूमि ने भारतीय सभ्यता और संस्कृति को अनेक दृष्टियों से अपना योगदान दिया। हजारों वर्षों से केरल पहाड़ी दर्रों और समुद्र के माध्यम से भारत के शेष भू-भाग तथा पश्चिम एशिया के खाड़ी देशों, दक्षिण-पूर्व एशिया एवं यूरोपीय देशों से सम्पर्क में रहा है। यही कारण है कि यहां की देशीय संस्कृति में अनेकानेक संस्कृतियों के रंग घुल-मिल गए हैं। तमाम प्रभावों के बावजूद प्राचीन भारतीय संस्कृति को केरल-तमिलनाडू ने अपने ढंग से आज भी जीवंत रखा है। विशेष तौर पर प्राचीन विद्याओं, कला-परम्पराओं, धार्मिक अनुष्ठान, आयुर्वेद, वास्तु, ज्योतिष आदि की दृष्टि से केरल भारतीय संस्कृति और सभ्यता का मेरुदंड बना हुआ है। केरल की प्राचीन एवं मध्यकालीन संस्कृति पर वेदोपनिषद् एवं पुराणों का व्यापक प्रभाव रहा है। आज भी केरल के ग्राम एवं नगरों में भगवतपुराण सप्ताह के आयोजन बड़े पैमाने पर होते हैं। वहां के अनेकानेक नगर एवं तीर्थक्षेत्र पुराण-प्रसंगों से आप्लावित हैं।

पुराणों में भारत के क्षेत्र विस्तार और प्राकृतिक-वैशिष्ट्य पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश डाला गया है। पुराणों की दृष्टि में मलय पर्वत एवं केरल-तमिलनाडू की विशिष्ट भौगोलिक स्थिति ओझल नहीं है। यही कारण है कि हिमालय से लेकर समुद्र तटवर्ती मलय पर्वत तक सभी क्षेत्रों के ग्राम, नगर, पठार, पर्वत, वन, नदी और उनसे जुड़ी सभ्यता का यथार्थ वर्णन पुराणों में सहज ही उपलब्ध है। विभिन्न पुराणों में पर्वतों को देवतुल्य माना गया है। आखिर क्यों न हो, वे प्राकृतिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक एवं सैन्य-सुरक्षा की दृष्टि से विशेष महत्त्व रखते आ रहे हैं। पुराण हिमालय

को तो उच्चतम स्थान देते ही हैं। सात कुल पर्वतों के मध्य 'मलय' को भी विशेष महिमाशाली बताते हैं। मत्स्य पुराण (११४/१७) के अनुसार –

सप्त चास्मिन् महावर्षे विश्रुताः कुलपर्वताः।
महेन्द्रो मलय सह्यः शुक्तिमानृक्षवानपि।।
विन्ध्यश्च पारियात्रश्च इत्येते कुलपर्वताः।
तेसां सहस्रशश्चान्ये पर्वतास्तु समीपतः।।

अर्थात् इस महान् भारतवर्ष में सात सुविख्यात कुल पर्वत हैं – महेन्द्र (कलिंग-उड़ीसा), मलय (पश्चिमी घाट का दक्षिण भाग अर्थात् वर्तमान केरल), सह्य (पश्चिम घाट का उत्तरी भाग अर्थात् महाराष्ट्र-कोंकण क्षेत्र), शुक्तिमान् (विंध्य पर्वतमाला का एक भाग-रायगढ़ से लेकर मानभूम जिले तक विस्तृत), ऋक्षवान (विंध्य पर्वतमाला का पूर्वी भाग-बंगाल की खाड़ी से लेकर अमरकंटक तक), विंध्य (भारत का कटिप्रदेश, जो दक्षिणपथ को उत्तर से पृथक् करता है) और पारियात्र (विंध्य पर्वतमाला का पश्चिमी भाग, जो चम्बल, शिप्रा, बेतवा का उद्गम है) इनके समीप अन्य हजारों पर्वत हैं। इन कुल पर्वतों का उल्लेख विष्णुपुराण (२/३/३), भागवत (३/१३/४१), नरसिंह पुराण (३०/१२), मार्कण्डेय पुराण(५४/१०-११) आदि अनेक पुराणों में मलय पर्वत को हिमालय के बाद विशेष महत्त्व दिया गया है। इसका एक नाम नीलगिरि भी मिलता है। मलय पर्वत से निकलने वाली नदियों के संबंध में मत्स्य पुराण (११४/३०) का कथन है –

कृतमाला ताम्रपर्णी पुष्पजा चोत्पलावती।
मलयान्निः सृता नद्यः सर्वाः शीतजलाः शुभाः।।

अर्थात् कृतमाला (वैगई नदी) ताम्रपर्णी, पुष्पजा (कुसुमांगा, पेम्बै या पम्बा या पेन्नार नदी) और उत्पलवती ये कल्याणमयी नदियां मलयाचल से निकली हुई हैं। इनका जल बहुत शीतल होता है।

भागवत (३/१३/४१, २३/३९, ४/२८/३३-३५, ८/४/३) में मलय पर्वत को कुलाचल भी कहा गया है, जहां इतिहास प्रसिद्ध पाण्ड्यवंश के मलयध्वज अपना राजपाट पुत्रों में बांटकर तप करने गए थे। यहां ताम्रपर्णी चंद्रमासा और वटोदका नदियों के प्रवाह की चर्चा भी मिलती है। इस पर्वत पर अनेक ऋषियों के आश्रम का उल्लेख भागवत आदि पुराणों में मिलता है।

पुराणों में मलय पर्वत से निःसृत नदियों के बीच ताम्रपर्णी को विशेष महत्त्व मिला है। यह तमिलनाडू के तिरुनेल्वेली जिले से होकर बहती है। इन पुराणों में अगस्तिकूट गिरि से निःसृत माना गया है। ब्रह्माण्डपुराण (२/१६/३६, ३/१३/२४, ४/३३/५२, एवं विष्णुपुराण (२/३/१३) के अनुसार यह नदी मलय पर्वत के चंदन के वनों से होकर बहती है, जो मोती एवं शंख के लिए प्रसिद्ध है। श्राद्ध की दृष्टि से भी इसे पवित्र माना गया है। ताम्रपर्णी का उल्लेख रामायण एवं महाभारत में भी मिलता है। अशोक के शिलालेख में इसका उल्लेख हुआ है। टालेमी ने भी इसका वर्णन किया है व महाकवि कालिदास (प्रथम शती ई० पू.) ने 'रघुवंश' (४/४९-५९) में रघु की

दिग्विजय यात्रा के प्रसंग में प्राचीन पाण्ड्य देश (दक्षिण तमिलनाडू) के राजा रघु की विजय का वर्णन करते हुए ताम्रपर्णी, उसके संयुक्त एक उत्तम मोतियों वाले महासागर, मलय, दुर्दर गिरि तथा केरल का उल्लेख किया है। वायुपुराण (७७/२४.५) के अनुसार ताम्रपर्णी दक्षिण सागर में गिरती है, जहां संगम पर मोती शंख आदि मिलते हैं। वर्तमान युग में भी ताम्रपर्णी का यह गौरव और महिमा बनी हुई है। मलय पर्वत से निकलने वाली वैगई (कृतमाला) के दक्षिण तट पर मदुराई जैसी प्राचीन नगरी अवस्थित है, जहां तीन तमिल संगमों में से अंतिम संगम लगभग दो हजार वर्ष पूर्व सम्पन्न हुआ था।

केरल की जीवन रेखा के रूप में प्रसिद्ध पम्बा(पंपा) भी मलय पर्वत से निकलने वाली एक प्रमुख नदी है। भागवत पुराण (७/१४/३१) के अनुसार यह विष्णु को अतिप्रिय है और बलराम भी इसके तट पर आए थे। मत्स्यपुराण (२२/५०) के अनुसार पंपासर या पंपातीर्थ पितरों के श्राद्ध के लिए अत्यंत पवित्र है। रामायण एवं महाभारत में भी पंपा की महिमा का वर्णन हुआ है। रामायण के अनुसार पम्पा के निकट ही ऋष्यमूक पर्वत है और उसके समीप ही मलय पर्वत है। ऋष्यमूक से मलयगिरि पर जाकर ही हनुमान ने राम से मिलने का वृतांत सुग्रीव को सुनाया था। मलयालम 'अध्यात्म रामायण' एवं 'उत्तर रामायण' के रचनाकार आचार्य तुंचतु रामानुजन् एळुतच्छन् (१४७५-१५७५ ई.) ने पम्पा सरोवर का अत्यंत मनोहारी वर्णन किया है, ''राम अपने अनुज लक्ष्मण के साथ चलते हुए पम्पा सरोवर के तट पर पहुंचे और वहां की क्रोशमात्र विशाल, थकान दूर करने वाले, स्फटिक सम स्वच्छ जल से परिपूर्ण सरोवर और उसमें विकसित पद्म, कलहार, कुमुद, नीलोत्पल जैसे फूलों, हंस, कारण्डव, षड्पद, कोकिल, कुक्कुट जैसे पक्षियों तथा आपपास के प्रदेश में सर्प, सिंह, व्याघ्र, सूकर आदि पशुओं, पुष्प-लताओं से परिवेष्टित एवं स्वादिष्ट फलों से युक्त वृक्ष आदि को देखकर वे प्रसन्न हुए तथा जल-पान करके दाह बुझाकर मंद-मंद आगे बढ़े। फिर दोनों ऋष्यमूक पर्वत के पार्श्व स्थल पर पहुंच गए।'' (मलयालम अध्यात्म रामायण, किष्किंधा काण्ड १०, २०) वर्तमान युग में भी पम्पातीर्थ और शबरीमला (अय्यप्पा की तीर्थभूमि) के प्रति विशेष श्रद्धा भावना दक्षिण भारतीयों में दिखाई देती हैं।

पुराणों में केरल-तमिलनाडू के राजनीतिक इतिहास के भी महत्त्वपूर्ण संकेत मिलते हैं। मत्स्यपुराण में दक्षिण भारत के तत्कालीन शासकों में पांड्य, केरल, चोल, कुल्या आदि का उल्लेख मिलता है, जिनके आधार पर विभिन्न जनपद या देशों का नामकरण हुआ। मत्स्यपुराण के अनुसार –

अथापरे जनपदा दक्षिणापथवासिनः।
पाण्ड्याश्च केरलाश्चैव चोलाः कुल्यास्तथैव च।।
सेतुका मूषिकाश्चैव कुपथा वाजिवासिकः।
महाराष्ट्रा माहिषकाः लिंगाश्चैव सर्वशः।।
आभीराश्च सहैषीका आटव्याः शबरस्तथा।

पुलिंदा विन्ध्यमुलिका वैदर्भा दण्डकैः सह।।
कुलीयाश्च सिरालाश्च अश्मका भोगवर्धनाः।
तथा तैत्तिरिकाश्चैव दक्षिणापथवासिनः।।

(मत्स्यपुराण ११४/४७-५०)

अर्थात् अब दक्षिणापथ के देश बतलाये जा रहे हैं। पाण्ड्य, केरल, चोल, कुल्य, सेतुक, मूषिक, कुपथ, वाजिवासिक, महाराष्ट्र, माहिषक, कलिंग, आभीर, सहैषीक, आटव्य, शबर, पुलिन्द, विंध्यमुलिक, वैदर्भ, दण्डक, कुलीय, सिराल, अश्मक (महाराष्ट्र का दक्षिण भाग) भोगवर्धन (उड़ीसा का दक्षिण भाग), तैत्तिरिक, नासिक्य तथा नर्मदा के अंत:प्रांत में स्थित अन्य प्रदेश, ये दक्षिणापथ के अंतर्गत के देश हैं।

यहां पुराणकार ने वर्तमान तमिलनाडू प्रांत के चोल, पांड्य तथा केरल प्रान्त के केरल, मूषिक और कुल्य क्षेत्रों का उल्लेख किया है। ई. पू. तीसरी-चौथी शताब्दी से लेकर दूसरी-तीसरी शताब्दी ई. तक के ऐतिहासिक-साहित्यिक साक्ष्य भी इस बात की पुष्टि करते हैं। मत्स्यपुराण में चन्द्रवंशी राजा ययाति की एक शाखा तुर्वसु से इन लोगों का संबंध बताया गया है।

तुर्वसोस्तु सुतो गर्भो गोभानुस्तस्य चात्मजः।
पांड्यश्च केरलाश्चैव चोलः कर्णस्तथैव च।
तेषां जनपदाः स्फीताः पाण्ड्याश्चोलाः सकेरलाः।।

(मत्स्यपुराण, ४८/१-५)

अर्थात् (ययाति के पंचम पुत्र) तुर्वसु का पुत्र गर्भ और उसका पुत्र गोभानु हुआ। गोभानु का पुत्र अजेय शूरवीर त्रिसारि हुआ। तदनन्तर शापवश तुर्वसु का वंश पुरु वंश में प्रविष्ट हो गया था। दुष्यंत का पुत्र राजा वरुध था। वरुध से आण्डीर (भुवमन्यु) की उत्पत्ति हुई। आंडीर के संधान, पांड्य, केरल, चोल और कर्ण नामक पांच पुत्र हुए। उनके समृद्धिशाली देश उन्हीं के नाम पर पाण्ड्य, चोल और केरल नाम से प्रसिद्ध हुए।

वस्तुत: जिस समय उत्तर भारत में मौर्य (३२१ ई. पू.-१८५ ई.पू.) तथा कुषाणों (प्रथम शती ई.पू.-द्वितीय शती ई.) का शासन था, दक्षिण भारत सातवाहन, चेर, चोल और पांड्य वंश के शासकों के अधीन था। उनमें से सातवाहनों का पुराणों में आंध्र के रूप में उल्लेख मिलता है, जो मुख्यत: महाराष्ट्र और कर्नाटक-आंध्र के शासक थे। चेर, चोल एवं पांड्य मलय पर्वत के दोनों ओर केरल-तमिलनाडु में स्थापित था। इनमें चेर वर्तमान केरल और पश्चिम तमिलनाडू के हिस्सों के शासक थे, जिनकी राजधानी ३०० ई.पू. से ३०० ई. तक करुर या करूवूर या करुर वंजी रही। करुर दक्षिण की प्रमुख नदी कावेरी की सहायक नदी अमरावती के तट पर स्थित है। इनका मुख्य बंदरगाह मलाबार तटीय क्षेत्र में मुजिरिस था। चेर शासकों में महान् सेनकुट्टुवन हुआ था, जिसके बारे में कहा जाता है कि उसने उत्तर भारत में भी सैन्य अभियान छेड़ा था और गंगा नदी को भी पार कर गया था। चेरों की शक्ति द्वितीय शती ई. में घटने लगी थी। विष्णु, मत्स्य, वायु, ब्रह्माण्ड आदि पुराणों में चेर (केरल) वंश के उल्लेख से सिद्ध होता है कि इन पुराणों का रचना काल ३०० ई.पू.

से ३०० ई.पू. के मध्य का है। यही काल 'तमिलकम्' (तमिलभाषी क्षेत्र) में संगम युग के नाम से सुविख्यात है।

करुर दक्षिण भारत का एक प्राचीन नगर था, जो पश्चिम में मलय पर्वत के पार मलाबार तट के मुजिरिस बंदरगाह से लेकर पूर्व में कोरोमंडल तट के कावेरीपट्टनम् बंदरगाह के मध्य एक महत्त्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग पर स्थित था। इसीलिए इस नगर में चेर, पांड्य, सातवाहन शासकों से लेकर पश्चिम के ग्रीक फोनेशिया एवं रोम शासकों तक की मुद्राएँ प्राप्त हुई हैं। इस क्षेत्र के चेर राजाओं का उल्लेख शिलालेखों में भी मिलता है। तमिल महाकाव्य 'शिलप्पदीकारम्' में प्रसिद्ध चेर राजा चेरन सेनकुट्टुवन का उल्लेख मिलता है। ग्रीक अन्वेषक टालेमी ने भी कोरेवोरा (करुर) का उल्लेख एक प्रसिद्ध अन्तर्देशीय व्यापारिक केन्द्र के रूप में किया है। प्रारंभिक चेर राजाओं के शासन के बाद करुर पर क्रमशः पांड्यों, पल्लवों और चोलों का अधिकार रहा।

पुराणों में उल्लेखित चोल शासक मुख्यतः तमिलनाडू के तिरुचिरापल्ली या तिरुचि-तंजावूर क्षेत्र के शासक थे। इनकी दो राजधानियां-उरैयूर (तिरुचि के पास) मुख्य राजधानी के रूप में और बंदरगाह नगर कावेरीपट्टनम् दूसरी राजधानी के रूप में थीं। करिकाल एक महानतम चोल शासक था, जिसने तिरुचि के पास कावेरी पर कल्लानै बांध का निर्माण करवाया था। पांड्य शासकों के अधिकार में दक्षिण-तमिलनाडू के मदुराई, रामनाथपुरम् और तिरुनेल्वेली क्षेत्र थे। उनकी राजधानी मदुराई थी ओर प्रमुख बंदरगाह कोरकै था। पांड्य शासकों में नेंडुचेकियन एक महान राजा था। कहा जाता है कि पांड्य राजाओं ने रोमन सम्राट आगस्टस (२७ ई.पू.-१४ ई.) के दरबार में अपना एक राजदूत भी भेजा था। चेर, चोल ओर पांड्य शासकों ने न केवल आपस में युद्ध लड़े, वरन् श्रीलंका के साथ भी उन्होंने अनेक बार युद्ध किए।

पांडय्, केरल, चोल आदि की वंश परम्परा के आधार में रहे तुर्वसु वंश के लोगों का उल्लेख थोड़े से अंतर के साथ ऋग्वेद (तुर्वश के रूप में), भागवत (९/२३/१६), विष्णुपुराण (४/१६/३), वायु (९९/५), ब्रह्माण्ड (३/७५/७) में भी मिलता है। पुराणों के अनुसार तुर्वसु लोग प्रथमतः पश्चिम की ओर बढ़े और उन्होंने सिंधु घाटी में स्वयं को प्रतिष्ठित किया। यहां से वे दक्षिण भारत गए और वहां की परवर्ती सभ्यता के पूर्वज बने। इस विवरण से आर्य-द्रविड़ सभ्यता के बीच गहरे संबंध का संकेत मिलता है। ययाति की ही वंश परम्परा से जुड़े द्रुहयु वंश का उल्लेख भी मत्स्य (४८/६) आदि पुराणों में मिलता है, जिन्होंने गांधार देश (अफगानिस्तान) को बसाया था ओर इनके पूर्वज पहले से ही पश्चिमोत्तर प्रांत में शासन कर रहे थे। वस्तुतः तुर्वसु एवं दह्यु वंश से जुड़े पौराणिक उल्लेखों का पुरा-ऐतिहासिक साक्ष्यों के साथ गहन अनुशीलन किया जाए तो संभव है आर्य-द्रविड़ सभ्यता से जुड़े प्रश्नों का युक्तिसंगत समाधान हो जाए।

महावलि-वामन, इन्द्र द्वारा मलय पर असुरों से युद्ध (वामनपुराण, ७१/१-७), परशुराम आदि से सम्बद्ध अनेकानेक पौराणिक आख्यान मलय पर्वत और केरल-तमिलनाडू से जुड़े अनेक ऐतिहासिक-सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों पर आधार सामग्री प्रस्तुत करते हैं। इसी प्रकार पुराणों में मलय पर्वत एंव केरल-तमिलनाडू में विद्यमान अनेक तीर्थों का उल्लेख मिलता है, जिनसे इस क्षेत्र

के सांस्कृतिक-धार्मिक इतिहास के छुए-अनछुए पहलुओं पर प्रकाश डाला जा सकता हैं। उदाहरण के लिए नरसिंहपुराण के पैंसठवें अध्याय में विभिन्न तीर्थों और उनसे संबंध रखने वाले भगवान के नामों का उल्लेख मिलता है। इन तीर्थों में केरल तीर्थ भी एक है –

विरजं पुष्पभद्रायां बालं केरलके विदुः।
यशस्करं विपाशायां माहिष्मत्यां हुताशनम्।। (नरसिंह, ६५/२२)

अर्थात् पुष्पभद्रा के तट पर विरज का, केरलतीर्थ के रूप में बाल रूप भगवान का, विपाशा के तट पर भगवान यशस्कर का और माहिष्मतीपुरी में हुताशन का (दर्शन मुक्तिदायी है।) इसी प्रकार देवी भागवत (सप्तम स्कंध) में उल्लेखित एक सौ आठ सिद्धपीठों में मलय पर्वत पर 'रम्भा', 'कल्याणी' तथा किष्किंधा पर 'तारा' देवी के तीर्थों का वर्णन मिलता है।

स्पष्ट है कि पुराणों की ऐतिहासिकता एक निर्विवाद तथ्य है। इस दिशा में व्यापक अनुसंधानों की आवश्यकता है। मलय पर्वत और केरल-तमिलनाडू से जुड़े पौराणिक संदर्भ इतिहास की दृष्टि से पर्याप्त उपादेय हैं। इनसे सिद्ध होता है कि ईसा से अनेक शताब्दियों पूर्व से मलय पर्वत का अभिज्ञान भारतीयों को था। उत्तर भारत से स्थल एवं जल मार्गों द्वारा यहां गमनागमन सुदूर उत्तर वैदिक काल से निरंतर होता रहा हैं यह पर्वत हिमालय के बाद सबसे अधिक महिमाशाली माना गया। केरल की भाषा 'मलयालम' का नामकरण भी इसी मलय पर्वत पर आधारित है। मलय पर्वत और केरल-तमिलनाडू प्रदेशों ने भारतीय संस्कृति और सभ्यता के विकास में अद्वितीय भूमिका निभाई है और वर्तमान में भी विभिन्न लोकाख्यानों, परम्पराओं, कला, शिक्षा, व्रत-पर्वोत्सव, संस्कार-अनुष्ठान, तीर्थ-मन्दिर क्षेत्र आदि में इसका सातत्य बना हुआ है।

आचार्य एवं कुलानुशासक
विक्रम विश्वविद्यालय,
उज्जैन (मध्य प्रदेश)

तत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बूद्वीपे महामुने।
यतो हि कर्म भूरेषा ह्यतोऽन्या भोगभमयः।।

जम्बू द्वीप में भारतवर्ष सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि यह कर्म भूमि है। इसके अतिरिक्त अन्यान्य देश भोग-भूमियां हैं।

विष्णु पुराण २/३/२२

अंग्रेजी संस्कृत भाषा की एक प्राकृत बोली है

पुरुषोत्तम नागेश ओक

यह तो विरला ही अवसर होता होगा जब यह अनुभव किया जाता हो कि अंग्रेजी भी संस्कृत भाषा की उसी प्रकार एक शाखा, प्राकृत बोली है जिस प्रकार अन्य अधिकांश भारतीय भाषाएँ हैं। इस तथ्य की पूरी अनभिज्ञता का दुष्परिणाम यह हुआ है कि अंग्रेजी शब्दकोशों के संकलनकर्ता स्वयं ही गलत हो गये हैं। वे लोग, जहां कहीं आवश्यक था, वहां अपने शब्दों का संस्कृत-मूल प्रदान कर सकने में विफल हो गये हैं, अथवा अशुद्ध शब्द-व्युत्पत्तिगत स्पष्टीकरण प्रस्तुत कर बैठे हैं।

'अप्पर' (Upper) शब्द को लीजिये। इसकी वर्तनी से स्पष्ट हो जाना चाहिये कि इसका मूल उच्चारण 'ऊपर' (Ooper) है, और यह इसी रूप में हिन्दी और संस्कृत में प्रयोग होता है। तथापि, कोई भी अंग्रेजी शब्दकोष आपको यह जानकारी नहीं देगा कि 'अप्पर' एक संस्कृत शब्द है। इतना ही नहीं, यदि अंग्रेजी भाषी लोग इसके ध्वनिगत उच्चारण 'ऊपर' को भी बनाये रख पाते, तो उनको इसमें कठिनाई अनुभव नहीं हो पाती कि हिन्दी और संस्कृत-भाषी लोग उनको सरलतापूर्वक समझ पाते।

'माऊस' (Mouse) यदि ध्वन्यात्मक रूप में उच्चारण किया जाये, तो 'मूस' (Moos) बोला जायेगा। फिर यह समझना कठिन नहीं होगा कि यह शब्द तो संस्कृत में 'मूषक' शब्द का खण्डित रूप है।

अंग्रेजी का 'स्वेट' संस्कृत का 'स्वेद' (Sweet-Sved) है। संस्कृत में 'नाम' अंग्रेजी 'नेम' (Name) है। अंग्रेजी में यह अन्य शब्दों के साथ भी प्रयुक्त होता है, यथा सियूडोनिम (Sudonam) एन्टोनिम (विलोम-नाम) (Pseudonym, Antonym) आदि। अत: अंग्रेजी शब्द 'Synonym' पूरी तरह संस्कृत है क्योंकि संस्कृत भाषा में 'समान नाम' कहने पर भी वही अर्थ प्राप्त होगा। 'Centre' की ध्वन्यात्मक उच्चरित-रूप देने पर 'Cen-tra' बोला जायेगा। अंग्रेजी में 'C' अक्षर को प्राय: 'क' ('K') के रूप में उच्चारण करते हैं, यथा Cut, Cough, Cot, Caught आदि में। 'C' की 'K' ध्वनि का उपयोग करने पर हमें स्पष्ट ज्ञान हो जाता है कि Centra तथ्यरूप में Ken-tra है। इसका समानक संस्कृत शब्द 'केन्द्र' है।

अपने मूल स्रोत 'संस्कृत' भाषा से सम्बन्ध-विच्छेद कर लेने के बाद, टेढ़े-मेढ़े रास्ते पर चलने के कारण, अंग्रेजी का उच्चारण भ्रमित हो गया। इसका 'C' अक्षर कभी 'K' (क) और कभी 'S' (स) बोला जाने लगा। इस प्रकार जबकि 'Centre' शब्द का सही उच्चारण 'केन्द्र' होना चाहिये था, 'कमेटी' का शुद्ध उच्चारण 'समिति' होना चाहिए था क्योंकि अंग्रेजी अक्षर 'C' को

'See' के रूप में (स) उच्चारण किया जाता है। Committee (कमेटी)का जब सही उच्चारण अर्थात् 'समिति' उच्चारण किया जाये, तब तुरन्त पहचाना जा सकता है कि यह तो एक संस्कृत शब्द है। यह इस तथ्य का द्योतक है कि 'Committee' जैसे शब्दों की मूल ध्वन्यात्मक संस्कृत वर्तनी बनाये रखते हुए भी अंग्रेजी भाषा किस प्रकार उच्चारण में पतनावस्था को प्राप्त हो गई है।

'Central' और 'committee' शब्दों को साथ-साथ लेने पर हमें ज्ञात होता है कि उनका उच्चारण 'केन्त्रल समिति' होना चाहिये। अत:, हम जान जाते हैं कि अंग्रेजी में प्रयुक्त 'Central Committee' संस्कृत शब्द केन्त्रल समिति' अथवा सही रूप में कहा जाए तो 'केन्द्रीय समिति' का पर्यायवाची रूप ही है। अंग्रेजी प्रयोग भ्रमित और सम्मोहित हो गया है। इसका कारण यह है कि एक ही (सी) 'C' अक्षर पर दो ध्वनियाँ 'स' और 'क' आरूढ़ हो गई हैं।

अंग्रेजी सर्वनाम 'you, we और she' संस्कृत के सर्वनाम, यूयम्, वयम् और सा' के विकृत रूप हैं। शराब का अर्थद्योतक संस्कृत का 'मदिरा' शब्द अभी भी अंग्रेजी और अन्य यूरोपीय भाषाओं में 'Madeira' (मदिरा) के रूप में ही प्रचलित है। गेय पदों के लिए प्रयुक्त तथापि 'साम' के रूप में उच्चरित अंग्रेजी 'Psalm' शब्द भी संस्कृत है जैसा 'सामवेद' संस्कृत शब्द से हमें ज्ञात होता है।

अंग्रेजी 'Known' और 'Unknown' शब्दों को ध्वन्यात्मक रूप में उच्चारण किये जाने पर स्पष्ट हो जायेगा कि ये दोनों संस्कृत भाषा के 'ज्ञान' और 'अज्ञान' ही है।

'Truth' और 'Untruth' की संस्कृत-मूलक कहकर व्याख्या नहीं की जाती। अंग्रेजी शब्दकोष की घोर शब्द-व्युत्पत्ति सम्बन्धी त्रुटि का यह एक उदाहरण है। इन दोनों शब्दों में से 't' अक्षर निकाल दीजिये, तुरन्त 'Ruth' (ऋत) और 'Untruth' (अनृत) शब्द प्राप्त हो जाएंगे जो संस्कृत शब्द हैं। यह सिद्ध करता है कि अंग्रेजी का 't' अक्षर संस्कृत शब्दों में अन्तर्क्षेपक है।

अंग्रेजी के 'Hunt, Hunter and Hunting' भी संस्कृत-मूलक शब्द हैं जैसा (मारने वाले के द्योतक) हन्ता, हान्तारौ (दो मारने वाले) और हन्तार: (कई मारने वाले) शब्दों से स्वत: स्पष्ट हैं।

'Para-typhoid, Para-military और Para-psychology' जैसे विपुल शब्दों में प्रयुक्त 'Para' अंग्रेजी उपसर्ग संस्कृत का 'पर' है जिसका अर्थ 'परदेश, पर-राष्ट्र आदि शब्दों में अन्य प्रकार का, या बाहर का, अथवा विचित्र है।

Disparate, disentangle, disengage जैसे शब्दों में प्रयुक्त एक अन्य अंग्रेजी उपसर्ग 'Dis' संस्कृत का 'दुश', 'दुष्', दुस्' उपसर्ग ही है जैसे 'दुश्चर', दुस्तर' में।

Perimetre अथवा Peripheral में सर्वदिक् का द्योतक 'Peri' 'परिश्रम' और 'परिमात्रा' में प्रयुक्त संस्कृत का 'परि' शब्द ही है। अंग्रेजी का Perimetre शब्द वास्तव में संस्कृत का 'परिमात्रा' ही है। इसी प्रकार, 'Trigonometry' संस्कृत में 'त्रिगुणमात्रा' है। यह तथ्य इस बात का द्योतक है कि प्राचीन विश्व संस्कृत-मूल पाठों की सहायता से ही 'गणित' का अध्ययन करता है।

माप के लिए अंग्रेजी शब्द मीटर (Metre) यदि ध्वन्यात्मक रूप में उच्चरित हो, तो संस्कृत शब्द 'मात्रा' के रूप में ही है। संस्कृत, हिन्दू परम्परा में मात्रा, संगीत औषधि और गणित आदि सभी में समान रूप से व्याप्त माप हैं। अंग्रेजी छन्द विद्या में भी यह मीटर शब्द संस्कृत-छन्दों के समान ही प्रयुक्त होता है। इसी के साथ-साथ काव्यगत पंक्ति के विभाजन भी 'फुट' कहलाते हैं जो संस्कृत छन्दशास्त्र की शब्दावली 'चरण' और पद का यथार्थ रूपान्तर है। स्वयं 'प्रोजोडी' शब्द भी संस्कृत शब्द 'प्रसाद' से है जो सभी काव्य का एक अनिवार्य गुण माना जाता है, अर्थात् इसकी भव्यता से श्रोता के मानस को चमत्कृत, प्रसन्न करने की योग्यता।

पेय वस्तु के रूप में 'पंच' नामक द्रव अंग्रेजी में होते हुए भी संस्कृत शब्द है जो पांच वस्तुओं के समूह का द्योतक है, जैसे संस्कृत में अनेक शब्द हैं, यथा पंच-गव्य (गौ से उत्पन्न पांच वस्तुएं), पंच-अमृत (पांच प्रकार का अमृत), पंच रत्न (पांच आभूषण) और (ग्राम) पंच (पांच लोगों की परिषद्)।

'Soup' (सूप) एक संस्कृत शब्द है, जैसा कि सर मोनियर विलियम्स के शब्दकोष में स्पष्टीकरण दिया गया है। पुरी स्थित जगन्नाथ मन्दिर के रसोइयों को 'सूपकार' कहते हैं।

लैटिन 'Sandalum' और अंग्रेजी 'Sandal' संस्कृत के 'चन्दन' शब्द के अपभ्रंश रूप हैं। अंग्रेजी 'Sugar' प्राचीन फ्रांसीसी 'Zuchre' ग्रीक 'Sakkharon' संस्कृत शब्द 'शर्करा' से व्युत्पन्न हैं। देशी खांड का अर्थ द्योतक अंग्रेजी 'Jaggery' शब्द भी 'शर्करा' का अशुद्ध उच्चारण है।

अंग्रेजी 'Tutty' फ्रैंच 'Titie' अरबी 'Tutiya' संस्कृत के 'तुत्थ' शब्द से ही निकले हैं। अंग्रेजी 'Pepper' , लैटिन 'Piper' , ग्रीक 'Peperi', संस्कृत के 'पिप्पलि' शब्द से उत्पन्न हैं। अंग्रेजी 'औरेंज' (Orange), अरबी में 'नारंज' और संस्कृत में 'नारंग' है। फ्रैंच, स्पेनिश और फारसी 'लीलक' संस्कृत का नीलक है। अंग्रेजी 'Ginger' लैटिन में Gingiber है, जो संस्कृत में 'शृंगेवर' से व्युत्पन्न है। संस्कृत के 'खाण्ड' शब्द से ही अंग्रेजी 'Candy' फ्रैंच 'Candi' और अरबी के 'कन्द' हैं।

अंग्रेजी 'Beryk' ग्रीक में 'Berullos' है जो संस्कृत के 'वैदूर्य' से व्युत्पन्न हैं। नीलवर्ण का द्योतक अंग्रेजी और स्पेनिश 'Anil' अरेबिक भाषा में 'Al-nil' है जो संस्कृत शब्द 'नीली से बने हैं। अंग्रेजी 'Aniline' शब्द भी उसी धातु से व्युत्पन्न हुआ हैं इसी से मिस्र देश में 'नील' नदी का प्राचीन हिन्दू 'नील-कृष्णा' नाम स्पष्ट हो जाता है। अपनी संस्कृत, हिन्दू पितृ परम्परा से शताब्दियों तक पृथक् रहने के कारण मिस्र देशवासी यह भूल गये कि संस्कृत में 'नील' का अर्थ नीलावर्ण था, और इसीलिए उन्होंने 'ब्ल्यू' (नीला) विशेषण अपनी नदी के नाम के आगे जोड़कर 'ब्ल्यू लाइन' (नीली नील) नदी नाम रख दिया, जो भाषा-शास्त्र की दृष्टि से घोर वेहूदगी है।

अंग्रेजी 'Aggressor' एक संस्कृत शब्द है क्योंकि 'अग्र' (Agra) का अर्थ 'आगे ओर 'सर' (Sar) चलना है। अत: जो व्यक्ति आगे बढ़ता है वह 'अग्रेसर' (Aggressor) है।

संस्कृत शब्द 'नासिका' अपभ्रंश-रूप होकर अंग्रेजी में 'Nose' हो गयी है, और उसमें 'Nasal' जैसे शब्द बन गये हैं।

अंग्रेजी 'Terrestrial' संस्कृत 'धरातल' शब्द से व्युत्पन्न है। यह इस तथ्य का द्योतक है कि 'भूमि' का अर्थद्योतक संस्कृत शब्द 'धरा' लैटिन भाषा में 'Terra' हो जाता है। इसी प्रकार 'बीच' का सूचक संस्कृत का 'मध्य' शब्द लैटिन और इंगलिश में 'मेडि' (Medi) हो जाता है, जिसके साथ 'Middle' शब्द बना है। अत: 'Medi-terranean Ocean' शब्द समूह का अर्थ वह सागर है जो बड़े भू-धरातलों के मध्य स्थित है। इसी से Mediator, Mediation, Middle, Meddle जैसे शब्दों की संस्कृत व्युत्पत्ति हो जानी चाहिए।

Tri-gono-metry तीन-आयाम-परिमाप की द्योतक 'त्रि-गुण-मात्रा' संस्कृत शब्दावली है। यह और सुसंस्कृत के 'दन्त-शस्त्र' से Dentistry जैसे शब्द इस तथ्य की ओर इंगित करते हैं कि अविस्मरणीय विगत-काल में विश्व के लोगों ने संस्कृत अध्यापकों के चरणों में बैठकर, संस्कृत पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से ही (विश्व के) सभी विज्ञानों और कलाओं का अध्ययन किया था। इसका एक अन्य दृष्टान्त Gerantology में उपलब्ध है – यह संस्कृत शब्द 'जरा' से व्युत्पन्न है जो वृद्धावस्था का द्योतक है, 'Anto' जीवन की समाप्ति सूचक 'अन्त' शब्द है – अर्थात् मृत्यु।

अंग्रेजी 'Heart' शब्द संस्कृत विशेषण 'हार्दिक' (अर्थात् Heart-felt) से व्युत्पन्न है। इसी प्रकार, संस्कृत का 'हिक्क' अंग्रेजी 'हिक्कप्स' है। 'Osteo-malacia' संस्कृत शब्दों 'अस्थि' (हड्डियों) और 'बुरी' अर्थात् रोगी हो जाने के द्योतक 'मल' का समूह है। 'Osteoporosis' शब्द भी हड्डियों के अर्थद्योतक 'अस्थि' से ही व्युत्पन्न है। यह तथ्य इस बात का द्योतक है कि प्राचीन विश्व में चिकित्सा की भारतीय प्रणाली 'आयुर्वेद' व्यवहार में आती थी और इसीलिए यद्यपि आज अंग्रेजी चिकित्सा-पद्धति 'ऐलोपैथी' प्रचलित है, तथापि इसमें अभी भी आयुर्वैदिक शब्दावली प्रयुक्त होती है।

'धूलि-मलिन-विकृत' का अर्थद्योतक संस्कृत शब्द 'मल' अंग्रेजी भाषा में व्यापक स्तर पर प्रयोग में आता है, यथा Mal-administration, Mal-adroit, mal-practice, malign, malevolence आदि में।

'Suo-moto' शब्द वास्तव में लैटिन है, फिर अंग्रेजी में विधि भाषा में व्यापक रूप में व्यवहार में आता है। यह संस्कृत शब्द 'स्व मत' का अपरिष्कृत उच्चारण है।

किसी शब्द का नकारात्मक शब्द-रूप प्रस्तुत करने के लिए संस्कृत उपसर्ग 'अ' और 'अन' का भी बहुत प्रयोग किया जाता है; यथा अंग्रेजी 'A-moral' और 'Un-known' में। संस्कृत में इनके समानक शब्द 'अमल' (अर्थात् शुद्ध) और 'अनभिज्ञ' हैं। 'टू' के रूप में उच्चरित अंग्रेजी 'Two' शब्द मूल संस्कृत में 'द्वौ' था। इसकी वर्तनी इस बात की द्योतक है कि इसका उचारण 'twou' आर्थात् 'द्वौ' किया जाना था। इसी प्रकार अंग्रेजी 'Three' संस्कृत का त्रि है जैसा 'Triology, triple, trilicate' आदि में। अंग्रेजी का trident शब्द पूर्णत: संस्कृत है।

चूंकि 'त्रि' का अर्थ Three और 'Dent' का अर्थ दांत अथवा नोकें हैं। इसी प्रकार 'making a dent' में dent शब्द संस्कृत 'दन्त' से है जैसा कि जब कोई रोटी का टुकड़ा दांत से काटता है, तो उसकी एक छाप रह जाती है।

अंग्रेजी tree संस्कृत का 'तरु' है। 'Bility' शब्दांश के साथ समाप्त होने वाले सभी शब्द 'Advisibility, Gullibility, Perceivability, Palatability'आदि संस्कृत अन्त्य शब्दांश 'बल-इति' प्रयोग करते हैं। जिसका अर्थ वैसा करने की क्षमता है; यथा जिसमें स्वादिष्ट बना सकने की क्षमता है, वह Palatability है। तब यह बात भली प्रकार से समझ में आ सकेगी कि अंग्रेजी शब्द 'Navigability' विशुद्ध संस्कृत का 'नावि गमन बल इति' समास शब्द है क्योंकि संस्कृत में 'नावि' का अर्थ नौका है 'गमन' (ग) गति की द्योतक है, बल का अर्थ वह है जिसकी क्षमता हो, और इति का अर्थ ऐसा है। यह प्रदर्शित करता है कि अंग्रेजी शब्द Navigability पूरी तरह संस्कृत शब्द है, फिर भी कोई अंग्रेजी शब्दकोष उसकी व्याख्या इस प्रकार नहीं करता है। यही बात संस्कृत-आधारित Stability (स्थ+बल+इति) शब्द की है जो संस्कृत में 'स्थ+बल+इति' है जिसका अर्थ है कि किसी भी स्थिति में (बने) खड़े रहने की क्षमता है। इसी से सहज निष्कर्ष यह निकलता है कि संस्कृत 'स्थ' धातु अंग्रेजी में 'स्त' (st) के रूप में व्यापक स्तर पर प्रयोग की जाती है; यथा 'stand, stationary, station, stationing' आदि में। इनसे मिलते-जुलते संस्कृत शब्द हैं 'स्थान, स्थानक, स्थित'।

दबाव या बोझ की द्योतक संस्कृत धातु भार से अंग्रेजी के 'Bary, sphere, Barometre' शब्द बने हैं।

'बराबरी' या 'समानता' के संस्कृत शब्द 'सम' से हमें अंग्रेजी के 'semi-cricle, Semisphere' (अर्थात् hemispere), Semblance, sample, similarity, similar आदि शब्द प्राप्त होते हैं।

अंग्रेजी भाषा के 'Maternity, Paterniti' संस्कृत के 'मातृ-नीति, पितृ-नीति' शब्द हैं। लैटिन में Mater-dei संस्कृत में मातृ देवी है। mother, maternal, matrimony आदि सभी शब्द संस्कृत में माता 'मातर' शब्दों से व्युत्पन्न हैं। अंग्रेजी शब्द 'Son, Sonny' संस्कृत के सुनु: शब्द से व्युत्पन्न हैं।

मौत के अर्थद्योतक संस्कृत मे 'मृत्यु' शब्द से अंग्रेजी के 'mortal, mortuary, morgue, post-mortem, immortal' आदि शब्द बने हैं।

पैर के अर्थद्योतक संस्कृत के पाद शब्द से ही अंग्रेजी के 'Biped' (द्विपाद), Tripod (त्रिपाद), Chiropody, Centepede (शतपाद), Pedeotrian (पादचर), Pedestal (पादस्थल) आदि शामिल मिलते हैं।

Suicide, patricide, matricide अंग्रेजी शब्द संस्कृत के 'स्वछिद', पितृछिद, मातृछिद' शब्द हैं। इसी बात से अंग्रेजी के Germicide, insecticide, pesticide जैसे

शब्दों का स्पष्टीकरण हो जाता है क्योंकि संस्कृत में 'छिद-छिन्न' का अंग्रेजी अर्थ 'Cutting, killing, ending, exterminating' होता है। इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि पश्चिमी भाषाएँ अभी भी संस्कृत की धातुओं से किस प्रकार अपने शब्द-निर्माण करती रहती हैं।

'Quo vadis ... quo warranto' जैसे संस्कृत वाक्य में प्रयुक्त 'Quo' लैटिन शब्द 'क्व' गच्छसि (तुम कहां जाते हो?) जैसे संस्कृत वाक्य में प्रयुक्त 'क्व' शब्द से उत्पन्न है।

अंग्रेजी भाषा का 'Myth' संस्कृत का 'मिथ्या' (अर्थात् झूठा) है। अंग्रेजी 'peter' संस्कृत में 'पितर' शब्द से व्युत्पन्न है। इसी प्रकार 'David' संस्कृत 'देवी+द' शब्द से है, और संस्कृत के 'ब्रह्म' शब्द का सदोषोच्चारण ही अब्रह्म (Abraham) है। अंग्रेजी कुलनाम 'Brahms' भारत में 'ब्रह्म' कुल शब्द के समान ही परिवार को एक शृंखला में सुबद्ध रखने की प्राचीन संस्कृत परम्परा की ओर इंगित करता है।

संस्कृत में 'मनोरम' के समान ही अंग्रेजी Panorama, Cinerama हैं। संस्कृत का अन्त्य 'रम' उसका द्योतक है जो मन को सुखद अथवा आकर्षक लगता है, उसमें प्रविष्ट हो जाता है।

Mar Somedody's Chances जैसे शब्दों में 'मार' शब्द संस्कृत का है जो 'मारने, चोट पहुंचाने अथवा हानि पहुंचाने' का अर्थद्योतक है। Band, Bondage, Bandage आदि संस्कृत के 'बंध, बन्धन' शब्दों से हैं।

Accept संस्कृत का अक्षिप्त (नहीं फैंका गया) है। Succinct संक्षिप्त है। अंग्रेजी 'Cough' संस्कृत का 'कफ' है। यद्यपि संस्कृत का 'कफ' बलगम का द्योतक है और अंग्रेजी 'Cough' इससे तनिक भिन्न है, तथापि यह देख सकना कठिन नहीं है कि 'Cough' बलगम (कफ) से ही उत्पन्न होता है। एक ही शब्द के अंग्रेजी और संस्कृत स्वर-समरूप में थोड़ा-सा अन्तर इस कारण है कि अंग्रेजी को अपने मूल संस्कृत स्रोत से पृथक हुए कई शताब्दियाँ व्यतीत हो चुकी हैं।

संस्कृत का अन्तर शब्द अंग्रेजी में 'इंटर' के रूप में उच्चारण किया जाता हैं यथा 'International, Inter-versity, interpret, interpolate, intermediate, intermittant, inter-dependent' आदि में।

पथ (Path) का अंग्रेजी और सुसंस्कृत, दोनों में ही समान अर्थ है, यद्यपि उच्चारण में अति-सूक्ष्म अन्तर हो गया है। तुलनात्मक और उत्तम श्रेणी के लिए अंग्रेजी भाषा में भी संस्कृत के अन्त्य शब्द ज्यों-के-त्यों प्रयुक्त होते हैं। संस्कृत में इसे 'तर-तम भाव' कहते है अंग्रेजी 'Greater, Bigger और Lesser' के लिए संस्कृत में क्रमशः 'अधिकतर, महत्तर, लघुतर का प्रयोग होता है। अंग्रेजी की उत्तम श्रेणी अर्थात् Superlative के Optimum, Maximum जैसे शब्दों के लिए संस्कृत में 'अधिकतम, महत्तम, लघुत्तम' शब्द-रूप हैं। अंग्रेजी शब्द 'Fraternity' संस्कृत का 'भ्रातृ नीति' शब्द है।

'रात' के लिए संस्कृत 'नक्तम्' और 'दिन' के लिए संस्कृत दिवस से अंग्रेजी

'Nocturnal and Diurnal' शब्द बने हैं। अंग्रेजी शब्द Regime, Reign, Sovereign, Suzerein आदि संस्कृत के राज्यम्, राजन्, स्वराजन् हैं।

अंग्रेजी का 'Go' शब्द संस्कृत के गम-गच्छ से निकला है। अंग्रेजी का 'Cow' शब्द संस्कृत के 'गौ' का ही उच्चारण है। गिरजाघरों में 'vestry' वह कमरा होता है जहां वस्त्र रखे जाते हैं। संस्कृत में भी इस प्रकार का कक्ष 'वस्त्रि' ही कहलाता है। इसी प्रकार 'Vesture' शब्द 'वस्त्र' है। इसी प्रकार 'Saint'(संस्कृत-संत), Preacher (संस्कृत का प्रचारक) और Adore (संस्कृत आदर) Door (संस्कृत द्वार), Man (मानव के लिए), Pater, mater, daughter (पिता, माता, दुहिता), Son-Sonny (संस्कृत 'सुनु' से), Deity (देवता), Theos (देवस्) सभी संस्कृत शब्द हैं। Pro-offer, Pro-create जैसे शब्दों में प्रयुक्त Pro उपसर्ग प्रवक्ता, प्रभात, प्रभाकर संस्कृत शब्दों में प्रयुक्त 'प्र' संस्कृत का वही उपसर्ग है।

Proto-type जैसे अंग्रेजी शब्द में 'Proto' जैसा उपसर्ग संस्कृत का प्रति उपसर्ग है, जैसे 'प्रति शिवाजी' में। अंग्रेजी का सम्मान-सूचक सम्बोधन 'Sir' संस्कृत के 'श्री' का अपभ्रंश उच्चारण है।

चूंकि अंग्रेजी शब्दकोशों में इस प्रकार के सभी स्पष्टीकरणों का नितान्त अभाव है, इसलिए प्रत्यक्ष है कि अंग्रेजी भाषा-विज्ञानी और शब्दव्युत्पत्ति शास्त्री लोग इस तथ्य से अधिकांशत: अनभिज्ञ हैं कि संस्कृत ही अंग्रेजी की आकर-भाषा है जो चाहे प्रत्यक्ष रूप में हो अथवा लैटिन और ग्रीक भाषा के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप में हो। यह तथ्य ऊपर दिए गए दृष्टान्तों से चरितार्थ हो ही चुका है। इस अनभिज्ञता, अज्ञान के फलस्वरूप ही अंग्रेजी शब्दों के संकलनकर्त्ता – कोशकार अपने शब्दों के मूल-स्पष्ट करते समय भयंकर गलतियां कर गए हैं। इस तथ्य के दृष्टान्त-स्वरूप हम सामान्य अंग्रेजी शब्द कोश के साथ दिए गए 'Widow and Widower' शब्दों की व्याख्या लें। 'Widow' शब्द का स्पष्टीकरण करते हुए ठीक ही लिखा गया है कि 'Widow is a woman who has lost her husband' अर्थात् विधवा वह महिला है जो अपना पति गवां चुकी है। जिसके पति की मृत्यु हो चुकी है। अगले 'Wodower' शब्द की व्याख्या करते हुए लिखा गया है कि यह 'विडो' शब्द से व्युत्पन्न है, और इसमें 'Er' प्रत्यय जुड़ा हुआ है। यह कहना शब्द-व्युत्पत्तिशास्त्र की दृष्टि से घोर गलती है। अंग्रेजी में 'Er' प्रत्यय का अर्थ 'करने वाला' होता है; यथा Labour + er, Sort + er, Lectur+ er का अर्थ Labour, sort and Lecture करने वाला है। अत: 'Er' यदि 'Widow' शब्द का प्रत्यय रहा होता, तो 'Widower' शब्द का अर्थ 'One who makes a woman widow' अर्थात् किसी विवाहित महिला के पति का हत्यारा, प्राणघाती होता जबकि 'Widower' शब्द का अर्थ वास्तव में वह व्यक्ति है जिसकी पत्नी मर चुकी है। अंग्रेजी कोशकारों ने यह भयंकर भूल मात्र इस कारण की है कि उनको यह ज्ञान नहीं था कि अंग्रेजी 'widow and widower' शब्द संस्कृत के विधवा और विधुर शब्दों के अपभ्रंश रूप हैं।

अंग्रेजी भाषा के व्युत्पन्न शब्दों की सूक्ष्म जांच-पड़ताल से कुछ अन्य गलतियाँ भी

सम्मुख प्रस्तुत हो जाएंगी। इस तथ्य से अंग्रेजी कोशकारों की समझ में यह बात आ जानी चाहिए कि वे 'Truth' और 'Untruth' जैसे शब्दों को 'ऋत' और 'अनृत' से व्युत्पन्न बताते हुए बहुत बड़ी संख्या में अंग्रेजी शब्दों का संस्कृत-मूल प्रस्तुत करने लगें। हम एक पग और आगे जा सकते हैं तथा कह सकते हैं कि न केवल अंग्रेजी, अपितु सभी यूरोपीय भाषाओं के कोशकारों के लिए यह शोभनीय कार्य होगा कि वे अपने शब्दकोषों को संस्कृत विद्वानों द्वारा पुर्नक्षित करा लें। कहने का अर्थ यह है कि यूरोपीय शब्दकोशों को संस्कृत की सहायता से पुनः लिखना श्रेयस्कर होगा। यदि उनको उग्रवाद और राजनीतिक कारणों से यह कार्य करने में कुछ संकोच अनुभव होता है, तो भारतीय लोगों को अपने अपंग और विकृत इतिहास के पुनर्लेखन-कार्य के अंश के रूप में यह कार्य अवश्य ही करना होगा।

भाषासु मुख्या मधुरा दिव्या गीर्वाणभारती।
तस्माद् हि काव्यं मधुरं तस्मादपि सुभाषितम्।।
(सं०लो०को० पृ० १३५

दिव्य भाषा संस्कृत सभी भाषाओं में मुख्य और मधुर है। संस्कृत मं भी काव्य और काव्य में भी सुभाषित बहुत अधिक मधुर है।

जाहर वीर गोगा जी चौहान

कुलदीप

महमूद गजनवी दुर्दान्त लुटेरा था, जिसने लाखों की सेना लेकर १२ बार भारत पर आक्रमण किया था और प्रत्येक बार अलग-अलग राज्यों को लूटकर अथाह धन व जन सम्पदा गजनी ले गया। उसका भीषण आक्रमण १०२५ ई. में सोमनाथ मन्दिर पर था। उसने न केवल मन्दिर तोड़ा बल्कि अकूत धन सम्पदा तथा महिलाओं को लूटकर गजनी ले गया। शिवलिंग के टुकड़े करके गजनी की मस्जिद की सीढ़ियों में जड़ दिये।

अजमेर व गुजरात के अनेक राजाओं ने महमूद की सेना से युद्ध किया और उसे परास्त किया। गोगा बापा का तो सम्पूर्ण परिवार उससे हुए युद्ध में काम आ गया। उन्होंने अपने पुत्र सज्जन व पौत्र सामन्त को अन्य राजाओं को जागृत करने तथा महमूद का प्रतिरोध करने के कार्य में लगाया। सज्जन ने रेगिस्तान में महमूद गजनी की सेना का विध्वन्स किया और सोमनाथ पर आक्रमण का बदला ले लिया। सामन्त ने भीमदेव के साथ मिलकर, सभी राजाओं को एकजुट कर सोमनाथ मन्दिर का पुर्ननिर्माण किया।

गोगाजी महाराज का जीवन समाज के लिए अत्यन्त प्रेरणादायी है। उन्होंने गौ-रक्षा हेतु युद्ध किये। धर्म की रक्षा हेतु अपना कर्त्तव्य पूर्ण किया। उनके जीवन पर जितना शोध हुआ है, उससे अनेक तथ्य प्रमाणित हो गये हैं। उनमें कुछ प्रमुख हैं —

१. गोगाजी का काल कलियुगाब्द ४०३७ से ४१२७, विक्रमी संवत् ९९२ से १०८२ तथा ईस्वी सन् ९३५ से १०२५ के मध्य का है।

२. गोगा जी अन्तिम समय में 'धर्म परिवर्तन कर मुस्लिम बने' यह धारणा नितान्त मिथ्या है। वे हिन्दू थे और हिन्दू के रूप में ही उन्होंने बलिदान दिया।

३. गोगाजी महमूद गजनवी से हुए युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए थे। जिस स्थान पर उनका शव गिरा था उसी स्थान पर उनके राजपुरोहित ने समाधि बनाई है।

महमूद गजनवी की पचास हजार की सुसज्जित फौज के डर से लोहकोट (लाहौर) और मुलतान के हिन्दू राजा मुंह में तिनका लेकर अपनी फौज सहित उसके साथ हो गये थे। रास्ते के सामन्तों की बिसात ही क्या थी? मरुभूमि की सीमा पर पहुंचते-पहुंचते उसके पास १ लाख पैदल, ३० हजार घुड़सवार, ३ हजार हाथी, ३० हजार ऊँटनियों पर पानी तथा लाखों अन्य सेवक थे।

जहां तक सम्भव हुआ, महमूद रास्ते के सामन्तों से समझौता करता हुआ, सोमनाथ मन्दिर को ध्वस्त करने के लिए आगे बढ़ रहा था। उसे भाटी प्रदेश (इस समय का बीकानेर क्षेत्र) होते हुए जालौर मारवाड़ के मार्ग से गुजरात-सौराष्ट्र जाना था। रास्ते में गोगामढ़ी थी, वहां के वृद्ध सरदार गोगा जी की यशोगाथा उसने सुन रखी थी। महमूद गजनवी ने एक देश-धर्मद्रोही तिलक नाम के भारतीय के साथ अपने सेनापति सालार मसूद को गोगा बापा के पास हीरे-जवाहरातों का थाल देकर भेजा। उसने कहा कि अमीर गजनवी अपनी फौजों के साथ आपके क्षेत्र से होकर प्रभास-पाटन जा रहा है, उसे आपकी सहायता चाहिए।

नब्बे वर्ष के गोगाबापा का शरीर क्रोध से कांपने लगा। गम्भीर गर्जन करते हुए उन्होंने कहा– ***''तेरा अमीर भगवान सोमनाथ के विग्रह को तोड़ने जा रहा है और मुझसे सहायता मांगता है। तू हिन्दू होकर उसकी हिमायत के लिए आया है। जा, अपने मालिक से कह दे कि गोगाबापा रास्ता नही देगा।''*** यह कहकर उन्होंने हीरे-मोतियों के थाल को ठोकर से दूर फैंक दिया।

बापा के २१ पुत्र, ४६ पौत्र और १०३ प्रपौत्र थे। ज्येष्ठ पौत्र सामन्त गोगा जी को अत्यन्त प्यारा था। उसकी शक्ल गोगा जी से मिलती-जुलती थी। इनके अतिरिक्त उनके पास नौ सौ शूरवीरों की छोटी सी सेना थी। पन्द्रह दिनों तक तैयारी होती रही। गढ़ की मुरम्मत हुई हथियार संवारे गये। चण्डी का और महारुद्र का पाठ होने लगा। एक दिन देखा कि गजनवी की फौज एक विशाल अजगर की तरह सरकती हुई गोगामढ़ी से आगे निकल रही है। शायद वह बापा से उलझना नहीं चाहता था।

प्रधान पुजारी नन्दीदत्त ने कहा–''बापा संकट टल गया है – यवन फौजें आगे बढ़ती जा रही हैं।'' बापा की सफेद मूंछें और दाढ़ी फड़कने लगी। उन्होंने कहा, हमारे शरीर में रक्त की एक बूंद के रहते भगवान शंकर के विध्वंस के लिए म्लेच्छ कैसे जा सकता है? हम लोग उनका पीछा करेंगे। आप गढ़ी में रहकर महिलाओं और बच्चों की सद्गति कर दें। ऐसा न हो कि उनके हाथों मेरे वंश का कोई जीवित व्यक्ति पड़ जाये।''

युद्ध की तैयारी के बाजे बजे। घोड़े और ऊँट सजाये गये। केसरिया बाना पहने ९०० वीर हाथों में तलवार, तीर ओर फरसे लिए हुए गजनवी की फौज का विध्वंस करने चले। दस वर्ष से छोटे बच्चों और स्त्रियों के लिए एक बड़ी चिता तैयार करके पुरोहित नन्दीदत्त ने उसमें अग्नि प्रज्वलित कर दी। उसका अपना जवान पुत्र तो बापा के साथ जूझने चला गया था। पत्नी, पुत्र-वधू और बच्चे सब जौहर की आग में कूद गए।

गढ़ के नीचे यवन सेना दिख रही थी। तीर की तरह तेजी से केसरिया वस्त्रों में थोड़े से वीर आ रहे हैं। 'अल्लाह हो अकबर' की गर्जना हुई। हरी पगड़ी और लाल दाढ़ीवाला अमीर हाथी पर चढ़ा हुआ अपनी फौजों को बढ़ावा देने लगा। नब्बे वर्ष के वयोवृद्ध बापा बिजली की तरह कड़क कर यवन फौजों का नाश कर रहे थे। एक बार तो गजनवी की फौज में तहलका मच गया, परन्तु संख्या और साज-समान का इतना अन्तर था कि दो घड़ी में सारे के सारे चौहान वीरगति को प्राप्त हो गये। दुश्मन के दसगुने आदमी मारे गये। गोगाबापा के वंश में बच गया एक पौत्र सज्जन और

उसका पुत्र सामन्त। वे दोनों मुहम्मद के आक्रमण की अग्रिम सूचना देने प्रभास पाटन गये हुए थे। वापस आते समय उन्होंने रास्ते में भागते हुए लोगों की बातें सुनी। एक बार तो दु:ख से रोने लगे, परन्तु तुरन्त ही संभलकर अपना कर्त्तव्य निश्चित किया। सामन्त तेज ऊँटनी पर चढ़कर गुर्जर नरेश भीमदेव के पास चला गया।

हाय रे दुर्भाग्य! हजारों बलिदान भी सोमनाथ की रक्षा नहीं कर सके। गोगा वीर से लेकर भीमदेव तक सभी वीर इस विधर्मी आंधी को रोक न सके ..... सोमनाथ का पतन हुआ। इस निर्मम लुटेरे ने अकूत धन सम्पदा को लूट लिया। गर्भ गृह का तहखाना रत्न, स्वर्ण, हीरे-मोती, माणिक आदि से अटा-सटा था। रत्न कोष को सन्दूकों में भर लिया तथा अस्सी मन वजनी ठोस सोने की जंजीर थी जिससे महाघंटा लटकता था, उसे भी तोड़ लिया गया। कंगरों, स्तम्भों में जड़े रत्नों को उखाड़ लिया, इन बर्बर बलूचियों ने और उन्हें ऊँटों पर लाद दिया।

इतनी मात्रा में धन पाकर वह पगला गया, जल्दी से जल्दी गजनी पहुंचना चाहता था। उसने उस अतुल सम्पदा को लघुतम मार्ग से ले जाने का निर्णय किया। कच्छ के रण में से उसका काफिला आगे बढ़ने लगा। भयंकर रण में एक मन्दिर के पास पैंसठ वर्षीय व्यक्ति इन्तजार कर रहा था, इस अथाह समुद्र सी फैली दैत्य सेना का। वह था गोगा जी का ज्येष्ठ पुत्र सज्जन चौहान। इस रेगिस्तान में सज्जन को अकेला देख सभी को आश्चर्य हुआ। उसे गजनवी के पास ले जाया गया। उसने अपना परिचय जैसलमेर के एक जागीरदार के रूप में दिया और कहा कि अगर अमीर चाहें तो वह उन्हें सीधे रास्ते से मरुस्थल पार करवा सकता है।

दूसरे दिन गजनवी ने अपनी फौजों को रास्ता बदलने का हुक्म दे दिया। सज्जन अपनी प्रिय ऊँटनी पर सबके आगे चला। चार दिन की यात्रा के बाद अहलकारों ने शोर मचाना शुरू किया कि आगे बीहड़ रेगिस्तान है जहां आदमी तो क्या पछी भी नहीं जा सकते। सेनापति सालार मसूद ने सज्जन को धमकाया, परन्तु वह अपनी बात पर अडिग रहा। वापस जाने में फिर पांच दिन लगते, इसलिए हिम्मत करके वे आगे बढ़े। पांचवें दिन दोपहर होते ही सामने भयानक अंधड़ आता हुआ दिखाई दिया। जलती हुई गरम रेत मुंह बाए हुए राक्षसी-सी वेग से बढ़ रही थी। चौहान की ऊँटनी जान को जोखिम में लेकर तेजी से आगे बढ़ने लगी। पीछे-पीछे महमूद की सेना। थोड़ी देरी में ही प्रलय का दृश्य उपस्थित हो गया। गर्म रेत के पड़ते हुए बवण्डर पशुओं और मनुष्यों को अंधा बनाने लगे। फौज बेतहाशा पीछे लौटी, परन्तु प्रलयकारी तूफान की-सी तेजी थके-मांदे पशुओं में कहां से आती? दस हजार ऊँट, हाथी और सिपाही गरम रेत के नीचे दब कर मर गये। जो बचे, उनमें से बहुतों को रात में बिलों से निकले हुए क्रुद्ध काले-पीले सांपों ने डस लिया। ऐसा लगता था कि शिव ने अपने गणों को यवनों की फौज का नाश करने के लिए भेजा है।

वीर चौहान ने भी अपनी ऊँटनी सहित वहीं मरु-समाधि ली। उसके चेहरे पर उल्लास और आनन्द था कि उसने दुश्मनों को इस प्रकार समाप्त कर दिया। गोगाबापा और उसके वंशजों की पुण्य कहानी यहीं समाप्त हो जाती है। उनका यशोगान उत्तर भारत के हर व्यक्ति की जुबान पर आज भी है। भाद्र मास में गोगामढ़ी में उनकी पुण्य-स्मृति में स्थान-स्थान पर मेला लगता है।

गोगा जी चौहान का एक नाम 'जाहरवीर' भी हो गया है। उत्तर प्रदेश में तो वे इसी नाम से पूजे जाते हैं। कहा जाता है कि गोगाजी ने अपने अंतिम काल में धर्म परिवर्तन कर लिया था और मुस्लिम धर्म स्वीकार करने के बाद वे 'पीर' माने गये और जाहरपीर कहलाए। यह धारणा बिल्कुल भ्रान्त है। वे पीर नहीं वीर थे। जिस व्यक्ति ने विशाल म्लेच्छवाहिनी से अपने देश और धर्म की रक्षा करते हुए बड़ी वीरतापूर्वक प्राण त्यागे, उसके लिए ऐसी कल्पना भी अशोभनीय है। समय पाकर गोगाजी का वीरचरित्र जब लोक-मानस में श्रद्धापूर्वक स्थापित हो चुका, तब सम्भवत: मुसलमानों ने उन्हें जाहरपीर कहकर इस भ्रान्ति को जन्म दिया हो। यह भी संभव है कि गोगाजी के बहुत बाद उनके एक वंशज करम चन्द जिसे फैरोज तुगलक ने चौहान से मुसलमान बना दिया था, उनके वंशजों ने गोगा जी के विषय में मुसलमान होने की कहानी गढ़ ली हो।

आज भी मंदिर का स्वरूप मस्जिदनुमा करके तथा समाधि का स्वरूप कब्रनुमा करके यह स्थापित करने का षड्यन्त्र जारी है कि गोगाजी मुस्लिम थे। सभी प्रकार के ऐतिहासिक प्रमाणों से यह पूर्णतया स्पष्ट है कि गोगाजी हिन्दू थे और महमूद गजनवी से सोमनाथ की रक्षार्थ युद्ध करते हुए उनका बलिदान हुआ था।

गोगा जी नागों के देवता माने जाते हैं। नागों के साथ उनका क्या सम्बन्ध था और वह कैसे हुआ, इस सम्बन्ध में कोई पुष्ट प्रमाण उपलब्ध नहीं। अनूप संस्कृत लाईब्रेरी में गोगाजी के सम्बन्ध में जो हस्तलिखित गीत आदि मिलते है। उनमें गोगाजी का किसी न किसी रूप में सर्प से सम्बन्ध बताया गया है। डॉ. सत्येन्द्र ने ऐनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका से फ्लूटार्क का निम्न मत उद्धृत किया है कि "पुराने जमाने के मनुष्य वीरों से सांप का संबंध विशेष दिखाते थे। इसीलिए गोगा वीर लोक देवता के रूप में सर्पों के देवता के रूप में प्रसिद्ध हैं।

श्री राम कुंज
दयानन्द कलॉनी
कुरुक्षेत्र– हिरयाणा।

महान समाज सुधारक : संत पीपाजी

ललित शर्मा

पौरुष की अभिव्यक्ति का माध्यम केवल युद्ध करना ही नहीं होता अपितु यह अभिव्यक्ति भक्ति और जनसेवा के माध्यम से भी होती है। मध्ययुगीन भारतीय भक्तिकाल में महान संत पीपाजी ने अपनी सेवाभावना से यह सिद्ध कर दिखाया कि भक्ति और समाज सुधार की कर्म भावना भी ऐसी हो सकती है जिसके करने से व्यक्ति काल, कर्मादि जैसे शत्रुओं के लिये अपराजेय हो जाए। राजस्थान के वीर शासकों की शौर्य गाथाओं से भरपूर इतिहास इस तथ्य का भी साक्षी हैं कि उनकी परम्परा में एक ऐसा भी पराक्रमी शासक राजस्थान की वीर प्रसूता भूमि पर हुआ, जिसके कारण राजस्थान का गागरोन दुर्ग जितना अपनी अभेद्यता के कारण प्रसिद्ध है उतना ही एक महान तीर्थ के रूप में भी है।

राजस्थान प्रदेश के झालावाड़ जिला मुख्यालय के निकट आहू और कालीसिंध नदी के किनारे बना प्राचीन जलदुर्ग गागरोन संत पीपाजी की जन्म और शासन स्थली रहा है। इसी के सामने दोनों नदियों के संगम पर उनकी समाधि, भूगर्भीय साधना गुफा और मंदिर आज भी स्थित हैं। उनका जन्म १४वीं सदी के अंतिम दशकों में गागरोन के खीची राजवंश में हुआ था[१]। वे गागरोन राज्य के एक वीर, धीर और प्रजापालक शासक थे। शासक रहते हुए उन्होंने दिल्ली के तत्कालीन सुल्तान फिरोज तुगलक से लोहा लेकर विजय प्राप्त की थी[२], किन्तु युद्धजन्य उन्माद, हत्या, लूट खसौट के वातावरण और जमीन से जल तक के रक्तपात को देख उन्होंने तलवार तथा गागरोन की राजगद्दी का त्याग कर दिया था।[३] ऐसे त्याग के तत्काल बाद उन्होंने काशी जाकर स्वामी रामानन्द का शिष्यत्व ग्रहण किया।[४] शिष्य की कठिन परीक्षा में सफल होकर वे स्वामी रामानन्द के बारह प्रधान शिष्यों में स्थान पाकर संत कबीर के गुरुभाई बनें।[५]

उनका जीवन चरित्र देश के महान समाज सुधारकों में एक नायाब नमूना है। भक्ति आंदोलन के संत ही नहीं अपितु बाद के समाज सुधारक संतों के लिये वे एक उदाहरण बन गए। उनकी ऐसी विचारधारा के कारण ही वे कई भक्त मालाओं के आदर्श चरित्र पुरुष बनकर लोकवाणियों में गाये गये। संत पीपाजी ने अपनी पत्नी सीता सहचरी के साथ राजस्थान में भक्ति एवं समाज सुधार समन्वय का अलख जगाने में विलक्षण योगदान दिया। उन्होंने उत्तरी भारत के सारे सन्तों को राजस्थान के गागरोन में आने का न्योता दिया।[६] स्वामी रामानन्द, संत कबीर, रैदास, धन्ना सहित अनेक संतों की मण्डलियों का पहली बार राजस्थान की धरती पर आगमन हुआ और युद्धों में उलझते राजस्थान में भक्ति और समाज सुधार की एक महान क्रांति का सूत्रपात हुआ। पीपाजी और सीता सहचरी ने उसी समय अपना राज्य त्याग कर गागरोन से गुजरात तक संतों की यात्रा का नेतृत्व

किया।[७] उन्होंने समुद्र स्थित द्वारिका तीर्थ को खोजा[८] और परदु:खकातरता, परपीड़ा तथा परव्याधि की पीड़ा की अनुभूति कराने वाली वैष्णव विचारधारा को जन-जन के लिये समान भावों से जीवनोपयोगी, सिद्ध किया। ***कालान्तर में गुजरात के महान भक्त नरसी मेहता ने उनकी इसी विचारधारा से प्रभावित होकर 'वैष्णव जन तो तैने कहये, पीर पराई जाण रै' पद लिखा, जो महात्मा गांधी के जीवन में भी प्रेरणादायी सिद्ध हुआ।***[९]

संत पीपाजी को निर्गुण भावधारा का संत कवि एवं समाज सुधार का प्रचारक माना जाता है। भक्त मीराबाई उनसे बहुत प्रभावित थी, तभी तो उन्होंने लिखा 'पीपा को प्रभू परच्यो दिन्हो, दियो रे खजानापूर'[१०] वहीं भक्तमाल लेखन की परम्परा का प्रवर्तन करने वाले नाभादास ने पीपाजी के जीवन चरित्र पर देश में सर्वप्रथम "छप्पय" की रचना की थी।[११]

संतों की परम्परा एवं भावना के अनुरूप पीपाजी ने गुरु महिमा के साथ ही सामाजिक जीवन मूल्यों तथा धार्मिक विसंगतियों और आचरण के दोषों पर सटीक टिप्पणियां की।
गुरु की महिमा को प्रमाणित करते हुए उन्होंने कहा—

पीपा के पंजरि बस्यौ, रामानंद को रूप।
सबै अन्धेरौ मिटि गयौ, देख्यौ रतन अनूप।।
लोह पलट कंचन कर्‌यौ, सतगुरू रामानंद।
पीपा पद रज है सदा, मिट्‌यों जगत को फंद।।[१२]

संत पीपाजी बाहरी आडम्बरों, थोथे कर्मकाण्डों और रूढ़ियों के प्रबल विरोधी थे। उनका मानना था कि "ईश्वर निर्गुण, निराकार, निर्विकार और अनिर्वचनीय है। वह बाहर भीतर घट-घट में व्याप्त हैं, वह अक्षत है और जीवात्मा के रूप में प्रत्येक जीव में व्याप्त है।" उनके अनुसार "मानव मन (शरीर) में ही सारी सिद्धियां और वस्तुएं व्याप्त है।" उनका यह विराट चिन्तन "यत्पिण्डेतत्ब्रह्माण्डे" के विराट सूत्र को मूर्त करता है और तभी वे अपनी काया में ही समस्त निधियों को पा लेते हैं। फिर किसी बाहरी मन्दिर या तीर्थ, पूजा की उन्हें कोई आवश्यकता नहीं रह जाती है। गुरु ग्रन्थ साहिब में समादृत इस महान् विभूति का यह पद इसी भावभूमि पर खड़ा हुआ भारतीय भक्ति साहित्य का कण्ठहार माना जाता है।

अनत न जाऊँ राजा राम की दुहाई।
कायागढ़ खोजता मैं नौ निधि पाई।।
काया देवल काया देव, काया पूजा पाँती।
काया धूप दीप नइबेद, काया तीरथ जाती।।
काया मांहे अड़सठि तीरथ, काया मांहे कासी।
काया माँहे कंवलापति, बैकुंठवासी।।
जे ब्रह्मण्डे सोई प्यंडे, जो खोजे सो पावै।
पीपा प्रणवै परमततरे, सद्‌गुरु मिलै लखावै।।[१३]

संत पीपाजी के वचनों की एक बड़ी विशेषता यह है कि वे सामाजिक समन्वय का

मंगलमय संदेश देते हुए कहते हैं:—

परमारथ के कारणै, जिनको जीवन अंत।
पीपा सोई सत पुरख, सोई सांचो संत।।[१४]
भलौ बुरौ सब एक है, जाकै आदि न अन्त।
जगहित हरि जो सेवये, पीपा सोई संत।।[१५]

वे इसी समन्वय की मिसाल हरेभरे गुलदस्ते से देते हैं। उन्हें अपने देश से बहुत प्यार था। इस देश की मिट्टी को अपनी आंखों का काजल बनाकर उन्होंने सदियों पहले भारत की बहुरंगी छवि को देख कर कहा था—

फूल बगीचा में घंणा, सबरों सुन्दर रूप।
पीपा जन मिल सब छबै, भासै रूप अनूप।।[१६]

सामाजिक समन्वय के अतिरिक्त वे मानवीय कर्म और धर्म में भी समन्वय देखते हैं। इसी क्रम में निर्गुण और सगुण में भी उनकी दृष्टि समन्वय भावों की रही है:—

हिरदै धरम नै, करमाई करम कमाण।
पीपा संत री ढ़ाल दे, भेदौ निहिच निसाण।।[१७] *एवम्*
सरगुण मीठौ खाण्ड सौ, निरगुन करूऔ नीम।
पीपा सदगुरु पुरस दे निरमय होकर जीम।।[१८]

उन्होंने अपने विचारों और कृतित्व से भारतीय समाज में सुधार का मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने लोक के कोण से शास्त्र को परखा और उसमें परिवर्तन भी किया। सदियों से भारत देश में चली आ रही चतु:वर्ण परम्परा में एक नवीन वर्ण "श्रमिक" नाम से सृजित करने में उन्होंने महत्ती भूमिका निभाई। उनके द्वारा सृजित यह नवीन वर्ण इस प्रकार का था जो हाथों से उद्यम कर्म करता और मुख से "ब्रह्मराम" का उच्चारण करता था जिसमें कर्म और धर्म का अद्‌भुत समन्वय था—

हाथाँ सै उद्यम करैं, मुख सौ ऊचरै राम।
पीपा सांधा रो धरम, राम रमारै राम।।[१९]

संत पीपाजी सच्चे अर्थों में लोक मंगल की समन्वयी पद्धति के प्रतीक थे। उन्होंने संसार त्याग कर निरी भक्ति करते हुए कभी पलायन करने का सन्देश नहीं दिया। वे तो अपने लोक के प्रति इतने समर्पित थे कि वे इसी से अपनी भक्ति के लिये ऊर्जा प्राप्त करते थे। यही कारण है कि मध्ययुगीन भारतीय सन्तों में उनकी अपनी प्रतिष्ठा है। वे लोकवाणी के वाहक भी है और लोक को समर्पित व्यक्तित्व भी। उनकी समूची वाणी ही लोक के परिष्कार के लिये है। अपनी वाणी में उन्होंने जो कुछ भी कहा उसकी अपनी व्यंजना है।

वे सामाजिक समन्वय के महान आख्याता इसलिये हैं कि उन्होंने उस ब्रह्म से साक्षात्कार कराया जिसकी खोज में मानव आजीवन भटकता है। उन्होंने सच्चे अर्थों में ब्रह्म के स्वरूप की पहचान पर जोर देते हुए कहा कि "उस ब्रह्म की पहचान मन में अनुभव करने से है।"

उण उजियारे दीप की, सब जग फैली ज्योत।
पीपा अन्तर नैण सौ, मन उजियारा होत।।[२०]

अपनी अन्तर्दृष्टि के प्रति भी उनका विशेष आग्रह था। देखा जाय तो प्रत्येक सच्चे भक्त की पूंजी उसकी अपनी अन्तर्दृष्टि होती है और यह दृष्टि मिलती है सच्चे गुरु की अमोघ कृपा से— सच्चे गुरु की पहचान क्या हो? पीपाजी इस साखी में उसका उत्तर बताते हैं—

सतगुरु साँचा जौहरी, परखै ज्ञान कसौट।
पीपा सूधोई करै, दे अणभैरी चोट।।[३१]

अपने गुरु भाई कबीर का उन्हें बहुत सहारा था। अत: वे उन्हीं की भांति अपने युग के पाखण्ड और आडम्बर के विरुद्ध तनकर खड़े हुए भी दिखाई देते हैं। वे उस सन्त की खुले शब्दों में भर्त्सना करते हैं जो केवल वेशभूषा से संत होता है, आचरण से नहीं—

पीपा जिनके मन कपट, तन पर उजरो भैस।
तिनकौ मुख कारौ करौ, संत जना के लेख।।[३२]

और इसी के साथ वे बड़े मर्म की बात कहते हैं कि— "सच्चा सूरमा वहीं है जो अपने अन्दर बैठे हुए शत्रुरूपी विकारों पर पूर्ण विजय प्राप्त करले।"

अलस अधीर छल ईर्ष्या काम क्रोध मद क्रूर।
पीपा जिणई जीतिया, तेई जण साँचा सूर।।[३३]

इसी के साथ उनका अपने मन पर भी जोर है और इसी से वे अपनी आत्मा में ही परमात्मा को देखते हैं—

मन आप दरसाया।
आप ही बिच्छ बीजँ अंकूरा, आप फूल फल छाया।।
आप हि सूरज किरन परकास्या, आप ब्रह्म जीव माया।।
आतम में परमातम दीखै, छाया माहीं माया।।
छाया माया आपै सबहि, पीपे साँच लखाया।।[३४]

और फिर वे लोक मंगल के लिये आपसी भेदभाव मिटाने पर भी बल देते हैं। उनकें इस विचार में एक महान तात्त्विक चिन्तन छिपा हुआ है। जिसमें एक परात्पर ब्रह्म राम के प्रति आस्था पर बल है उनका मानना है कि जब वह तत्त्व सर्वव्यापी है फिर विप्र, शूद्र का अंतर कैसा? इसी भावना पर वे कहते हैं—

संतौ एक राम सब मांही।
अपने मन उजियरौ, आन न दीखे कांही।।
एकै धाम रुधिर अर साँसा। छोट मौट तन मांही।।
एकौ मात पिता सबही के, विप्र छुद्र कोइ नांही।।
पीपा जो जन भरम भुलाने, तै ढुलरात सदां ही।।[३५]

संत पीपाजी ने भक्तिमार्ग एवं समाज सुधार की सच्ची भावना को अंगीकार कर जनमत का भेद मिटाने में कोई कसर बाकी नहीं रखी।[३६] एक बार वे दौसा में श्री रंगजी भक्त के आश्रम में बैठे थे, उसी समय दो शूद्र (हरिजन) स्त्रियाँ वहां आई। वे अति सुन्दर थी। पीपाजी ने उन्हें अपने

पास ससम्मानपूर्वक बैठाया तथा उनसे कहा कि "वे अपना रूप रंग राम जी की भक्ति न करके व्यर्थ गंवा रही हैं।" रंगजी ने उनसे कहा कि "ये नीच जाति की है।" तब पीपाजी ने उनसे कहा "मैं इन्हें दीक्षा दूंगा ताकि इनका यह लोक व परलोक सुधर जायेगा। ऊँच नीच का भेद समाप्त करने के लिये ही मैंने इन्हें बुलाया है।" अन्ततः उन्होंने दोनों स्त्रियों को दीक्षा प्रदान कर उस युग में ऊँच नीच और जनमत के भेद को समाप्त किया। यहां यह तथ्य संज्ञान में लाने योग्य है कि संत कबीर ने जिस ऊँच नीच, छुआछूत का विरोध किया, उसकी पहली क्रियान्विति पीपाजी ने उक्त दोनों शूद्रा महिलाओं को दीक्षित करके की।

उस युग में ही पीपाजी ने सामाजिक पर्दा प्रथा का कठोर विरोध उत्तरी भारत में पहली बार किया। इस बारे में उन्होंने बताया कि "जिसमें सच्ची भक्ति और आत्मबल के भाव हैं, उन्हें पर्दा करने की कोई आवश्यकता नहीं ।" उन्होंने कहा—

जहाँ पड़दा तही पाप, बिन पडदै पावै नहीं।
जहाँ हरि आपै आप, पीपा तहाँ पड़दौ किसौ।।[२७]

उन्होंने यह बात केवल वैचारिक धरातल पर ही नहीं की, वरन् उन्होंने उस प्रथा का निवारण पहले अपने जीवन में चरितार्थ करके भी बताया और अपनी पत्नी सीता सहचरी को आजीवन बिना पर्दे के ही रखा, जबकि तत्कालीन राजपूत राजाओं में पर्दा प्रथा का घोर प्रचलन था। संत पीपाजी के इस निर्णय पर विद्वान मेक्स आर्थर मैकालिफ ने बहुत सुन्दर टिप्पणी लिखी[२८]—

"Probably the first effort in modern times in India to abolish the tyranny of Parda by Pipa."

उनकी प्रीति की रीति भी बड़ी अनोखी है— इसे स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं—

प्रीत की रीति अनोखी जानौ।
चिन्ता नाई दुख सुख परे देहपै। चरण कमलकर ध्यानौं।।
जैसे चातक स्वाति बून्द बिन। प्रान समरपन ठानौं।।
पीपा जैहि राम भजन बिन। काल रूप तेही जानौ।।

उन्होंने लोक समन्वय के लिये ब्रह्म, भक्ति, नामरस, आत्मा, परमात्मा, कर्म, माया, वर्ण, अहिंसा, जीव, इन्द्रिय-निग्रह, अनहदनाद आदि पर ऐसी अनुपममेय अभिव्यक्ति दी जो सदियों बाद आज भी प्रासंगिक है। उनकी वाणी वास्तव में मात्र सुनने सुनाने के लिये नहीं है, वह तो आचरण में उतारने के लिये है। यह वाणी सहज और सम्प्रेषणीय है। इसमें लोक मंगल और समन्वयी भावनाओं की आराधना है और समूचे समाज के कल्याण के लिये किये जाने वाला आह्वान भी। ऐसा विराट आवाहन वही पौरुषमय संत या समाज सुधारक व्यक्तित्व कर सकता है जिसमें यह सामर्थ्य हो कि वह संत पीपाजी की तरह हिंसक सिंह को भी भक्ति का उपदेश दे सके। इसीलिये उनकी अभ्यर्थना करते हुए नाभादास ने भक्तमाल में सही कहा है—

परसि प्रणाली सरस भई, सकल बिस्व मंगल कियौ।
पीपा प्रताप जग बासना, नाहर कौ उपदेस दियो।।[२९]

यह कहना असंगत न होगा कि संत पीपाजी का रचना संसार लोक मंगल के लिये भक्ति

एवं सामाजिक समन्वय के सच्चे भावों पर आधारित है। आज जब धर्म, नस्ल, जाति, क्षेत्र जैसे भेदों को गहराकर मानवता विरोधी ताकतें सक्रिय है, ऐसे में महान संत पीपाजी की वाणी की राह ही हमें अखण्ड मानवता के पक्ष में ले जा सकती है।

संदर्भ एवं पाद–टिप्पणी

१. पीपा की कथा (हस्तलिखित) क्रम ३०६७१, प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के अनुसार बाड़मेर के समदड़ी ग्राम में पीपाजी मंदिर से प्राप्त सूचना के आधार पर पीपाजी का जन्म वि.स. १३८० एवं देहान्त संवत् १४४१ को हुआ था। इसी संवत् को आधार मानकर पीपापंथी समाज आज भी पीपाजी की जयन्ती मनाता है। परन्तु पीपाजी के जन्म वर्ष पर विद्वानों में मतभेद हैं। संत साहित्य मर्मज्ञ बृजेन्द्र कुमार सिंघल के अनुसार संत पीपाजी वि.स. १४०० में गागरोन के शासक थे तथा वि. स. १४२० में वे स्वामी रामानंद के शिष्य बने। राघवकृत भक्तमाल के अनुसार पीपाजी वि.स. १५४०–१५५० में जीवित थे। सिंघल के मतानुसार पीपाजी का जन्म वि.स. १४०० से पूर्व रहा है। विद्वान हीरालाल होश्वरी अपनी पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ राजस्थान लिटरेचर' (पृ. १४७–४८) में संत पीपाजी का जीवनकाल वि.स. १४४०–१५१० बताते हैं। विद्वान दिनेशचन्द्र शुक्ल और ओंकार नारायण सिंह अपनी पुस्तक 'राजस्थानी भक्ति परम्परा' में पीपाजी का जन्म वि.स. १४८२ लिखते हैं।

२. निजामी, ए.एच. – गागरोन फोर्ट, द सैकण्ड साका, ए मिसिंग लिंक– शोध साधना, सीतामऊ, वर्ष १२, अंक ९ (१९९१ ई.) मआसिरे महमूद शाही के पृ. १३४–१३९ के आधार पर।

३. शाह, अमीता– काशी मार्तण्ड (जगदगुरू रामानंद दिग्विजय) पृ. १५०

४. पीपा की कथा (ह.लि.) उपरोक्त वही

५. शर्मा ललित – रामानंद परम्परा के उद्‌गायक संत पीपाजी पृ. २६–२७

६. १. दाधीच, रामप्रसाद – राजस्थान का संत सम्प्रदाय (सामाजिक भूमिका) पृ. १७
   २. कपूर, अवधबिहारी – नवभक्तमाल (५वां खण्ड) राजस्थान के भक्त, भाग १ पृ. ७

७. उक्त, वही

८. कल्याण संत अंक विषेशांक, संवत् १९९४ वर्ष १२, प्रथमखण्ड, पृ. ५०८–०९

९. जुगनू, श्रीकृष्ण – समाज सुधारक पीपाजी, दैनिक भास्कर, दिनांक ९ अप्रैल २००९, पृ. ६

१०. सिंघल, बृजेन्द्र कुमार – मेरे तो गिरधर गोपाल (मीरा की मूल पदावलि), पृ. २९४ पद ६६,३०७

११. जुगनू, श्रीकृष्ण – उक्त वही

१२. त्रिपाठी, राममूर्ति – धर्मनिरपेक्षता और संत साहित्य : संत पीपाजी के परिप्रेक्ष्य में, पीपा वाणी (शोध लेख) २००४ ई. इन्दौर, पृ. १

१३. ग्रंथसाहिब (आदिग्रन्थ) राग धनाक्षरी, पद सं. १ शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी,

अमृतसर, अगस्त १९५१ में पीपाजी का मूल पद इस प्रकार दृष्टव्य है—

कायउदेवा काइयऊ देवल, काइअऊ जंगम जाती।
कायअऊ धूप दीप नेईवेदा, काइअऊ पूजउ पाती।।
कायआ बदुषंड षोजते, नवनिधि पाई।
ना कुछ आईबो न कुछ जाइबो, राम की दुहाई।।
जो ब्रह्मण्डे सोई पिण्डे, जो सोषे से पावे।
पीपा प्रणवे परमतत्तु है, सतगुरू होई लषावे।।

परन्तु परवर्ती साहित्यकारों, विद्वानों ने इसे जन के लिये साधारणतया अपनी भावधारा में लिखा जो लेख में रेखांकित है— इन दो पदों के भाव एक ही हैं, दृष्टव्य — १. सहगल, पूरनलाल — संत पीपाजी की कृतियों का संकलन एवं सम्पादन, १९७२, अप्रकाशित पीएचडी शोध प्रबन्ध, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, पृ. १७२

(२) चतुर्वेदी, परशुराम — संत काव्य संग्रह (हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद), पृ. १११

(३) नाभादास — श्री भक्तमाल, (७वां संस्करण, लखनऊ १९९३) पृ. ५२०

१४. तंवर सावरलाल — संत पीपाजी : एक अध्ययन, पृ. ६६ व ७५

१५. उक्त वही

१६. से २३.

(१) खीची, रघुनाथ सिंह (इन्द्रोका), सांवरलाल तंवर— संत पीपाजी एवं साध्वी सीता, स्मृतिग्रंथ, पृ. २५७—२६४

२. बुधौलिया, हरीमोहन (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन), मालवी भाषा और साहित्य (म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी) संत पीपाजी और उनकी वाणी, पृ. २५—२६

३. सहगल, पूरनलाल — उपरोक्त, पृ. २०७—२१० (सीषी खण्ड)

२४. सहगल — उक्त

२५. खीची, रघुनाथ सिंह सांवर लाल तंवर— पूर्वोक्त, पृ. २५७ व २६४

२६. उक्त वही

२७. उक्त वही

२८. मैकालिफ, मैक्स आर्थर — द सिक्ख रिलीजन (१९०५ ई.), अंग्रेजी, भाग ५, पृ. १११

२९. नाभादास — भक्तमाल (भक्तिरस प्रबोधिनी), टीका, संवत २०१७, व्याख्याकार — रामकृष्ण देव गर्ग, पृ. ४२६, मूल छप्पय से (साभार — श्रीमती मोहिनी देवी शर्मा, रामनगर जयपुर के सौजन्य से)

जैकी स्टूडियो,
१३, मंगलपुरा स्ट्रीट,
झालावाड़—३२६००१ (राजस्थान)

सन् □□□□-अंग्रेज़ी सेना के अत्याचारों की कहानी

विनोद कुमार लखनपाल

स्वाधीनता संघर्ष की कहानी का लम्बा, बहुत लम्बा सिलसिला उस दिन से आरम्भ हो गया था, जिस दिन किसी विदेशी आक्रांता ने भारत की धरती पर अपना पहला कदम रखा था। परन्तु जब हम स्वतंत्रता संग्राम की बात करते हैं तब हमारा तात्पर्य भारतीय इतिहास के उस विशेष दौर से होता है जिसमें भारत पर अंग्रेज़ों का शासन था। भारत में अंग्रेज़ी राज़ का सबसे बड़ा अभिशाप था देश का सम्पूर्ण रूप से शोषण। किसी भारतीय मनीषी ने भारत के अंदर यूरोपियनों की तुलना दीमकों के साथ करते हुए कहा था ''आरंभ में दीमकों की क्रियाएं या तो ज़मीन के नीचे अंधेरे में शुरू होती है या कम से कम दिखाई नहीं देती, किन्तु इन दीमकों का लक्ष्य निश्चित होता है वे चुपचाप और अज्ञात होकर उस लक्ष्य को प्राप्त करने में लगी रहती हैं। वे सारे वन के हरे वृक्षों को नष्ट कर डालती हैं और उन्हें भीतर ही भीतर खाकर उनके खोखले तनों में अपने भवन खड़े कर लेती हैं। उन भवनों से पास की और दूर की कड़ी मिट्टी की बामियों से अपने आने-जाने के लिए अनेक सुरंगें बना लेती हैं। यह दीमकें हर चीज पर धावा करती हैं, हर चीज को खा जाती हैं, भीतर ही भीतर जड़ों को खोद डालती हैं, खोखला कर देती हैं और सब वीरान कर डालती हैं।''

स्वानामधन्य राजा राममोहनराय ने अंग्रेज़ों की दीमक समान शोषण वृत्ति एवं निरंकुश तानाशाही को भांपते हुए ११ अगस्त, १८२५ को जे०एस० बकिंघम को जो Calcutta Journal के सम्पादक थे और जो बाद में वहां House of Lords के सदस्य बन गए थे, को लिखे एक पत्र में लिखा था ''स्वतंत्रता के शत्रु और निरंकुशता के मित्र आज तक कभी सफल नहीं हो पाए हैं और सफल हो भी नहीं पाएंगे।'' यद्यपि इसको एकाकी अभिव्यक्ति समझकर अंग्रेज़ों ने इसे गंभीरता से नहीं लिया, तथापि विदेशी नरपिशाचों को भारतीय भूमि से निकाल बाहर करने के लिए सन् १८५७ में प्रथम स्वाधीनता संग्राम लड़ा गया। उसे मात्र सिपाही विद्रोह अथवा ग़दर कहना क्रान्तिकारियों का अपमान ही होगा। देशी सैनिक अंग्रज़ी सत्ता के अधीन घुटन महसूस कर रहे थे। उन्हें अपने धर्म व स्वाभिमान को मारकर अंग्रेज़ी सरकार के आदेशों का पालन करना पड़ रहा था, जिससे वे छुटकारा पाना चाहते थे। अंग्रेजों की घिनौनी हरकतों ने भारतीय सैनिकों को अपने विरोध में खड़ा कर दिया। इस बात की पुष्टि लंदन टाईम्स के विशेष प्रतिनिधि सर विलियम हार्वर्ड रसल जो सन् १८५७ की महान क्रांति के समय भारत में उपस्थित था, की पुस्तक My Diary in India in the year 1858-59 के पृष्ठ १६४ पर की गई इस टिप्पणी से ''वह एक ऐसा युद्ध था जिसमें लोग अपने धर्म के नाम पर, अपनी कौम के नाम पर बदला लेने के लिए और अपनी आशाओं को पूरा करने के लिए उठे थे। उस युद्ध में समूचे राष्ट्र ने अपने ऊपर से विदेशियों के जुए को फेंककर उसकी जगह देशी नरेशों की पूरी सत्ता और देशी धर्मों का पूरा अधिकार फिर से कायम करने का पूरा संकल्प

कर लिया था।'' इसी भाव को अंग्रेज़ इतिहास लेखक Justin McCarthy अपनी पुस्तक History of Our Own Times-Vol III में इस प्रकार लिखता है ''चर्बी के कारतूसों का मामला केवल इस तरह की एक चिंगारी थी जो अकस्मात इस सारें विस्फोटक मामले में आ पड़ी।.. . . .यह युद्ध एक राष्ट्रीय और धार्मिक युद्ध था।''*(The quarrel about the greased cartridges was but the chance spark flung in among all the combustible material..... that was a National and Religious War)* एक अन्य इतिहास लेखक Medlley अपनी कृति A year's campaigning in India from March, 1857 to March, 1858 में लिखता है ''किन्तु वास्तव में ज़मीन के नीचे ही नीचे जो विस्फोटक मसाला अनेक कारणों से बहुत दिनों से तैयार हो रहा था, उस पर चर्बी लगे हुए कारतूसों ने केवल दीयासलाई का काम किया।'' *(But, in fact, the greased cartridge was nearly the match that exploded the mine, which had owing to variety of causes, been for a long time preparing).*

१८५७ में लड़े गए प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के दौरान अंग्रेज़ों ने देश प्रेम से ओतप्रोत सैनिकों के अतिरिक्त निर्दोष एवं भोले-भाले बच्चों और बूढ़ी औरतों की नृशंश हत्या से पूर्व उन पर मानवता की सभी सीमाएं लांघकर किस प्रकार अमानुषिक अत्याचार करते समय भयंकर यातनाएं दी होंगी, इसकी कल्पना कर पाना आज हमारे लिए किसी भी प्रकार संभव नहीं है। यद्यपि अधिकांश अंग्रेज़ इतिहासकारों ने अपने देशवासियों द्वारा किए गए घिनौने कृत्यों के बारे में स्वयं को स्वेच्छा से बचाया है तथापि कुछ ऐसे भी थे जिन्होंने वास्तविक इतिहासकार होने का धर्म निभाते हुए सुस्पष्ट शब्दों में अपने बंधु-बांधवों द्वारा किए गए कूकृत्यों को उजागर भी किया था। विख्यात इतिहास लेखक John Keye and Malleson अपनी पुस्तक History of Indian Mutiny Vol-II के पृष्ठ १७७ पर लिखते हैं ''जो लोग फांसी पर लटकाए जाते थे, मज़े लेने के लिए उनके हाथों और पैरों अंग्रेज़ी के आठ और नौ अंकों की शक्ल में बांध दिया जाता था। जब यह उपाय भी काफी दिखाई न दिया तो अंग्रेज़ अफसरों ने घर जलाने शुरू कर दिए। गांवों के बाहर तोपें लगा दी जाती थीं और सब आदमियों, औरतों, बच्चों और जानवरों समेत सारे गांव को आग लगा दी जाती थी। आग इतनी होशियारी से लगाई जाती थी कि एक भी गांव वाला न बच सके।'' इतिहासकार Charles Ball अपनी पुस्तक Indian Mutiny में लिखता है ''माताएं अपने दूधमुहे बच्चों समेत और अनगिनत बूढ़े आदमी और औरतें जो अपनी जगह से हिल न सकते थे, बिस्तरों के अंदर जलाकर ख़ाक कर दिए गए।'' इलाहाबाद में हुए नरसंहार से माताएं, बच्चे, बूढ़े या अपाहिज कोई न बच सका था। इतिहास लेखक Holmes अपनी पुस्तक Speoy War में इलाहाबाद में किए गए नरसंहार बारे दुख के साथ लिखता है ''बूढ़े आदमियों ने हमें कोई नुकसान नहीं पहुंचाया था, बेसहारा औरतों से जिनकी गोद में दूध पीते बच्चे थे, हमने उसी तरह बदला लिया जिस तरह बुरे से बुरे नीच एवं दुष्ट अपराधी से।'' *(Old men had done us no harm, helpless women with suckling infants at their breasts, felt the weight of our vengeance no less than the vilest male factors)* इतिहास लेखक John Kaye भी इस बात को स्वीकारते हुए लिखता है कि अकेले इलाहाबाद के क्षेत्र में छह हजार भारतीयों को मौत के घाट

उतारा गया। इस बात में कोई संदेह नहीं कि इस क्षेत्र में जनरल नील ने इतने आदमियों को मारा जितने अंग्रेज़ आदमी और बच्चों को सारे भारत में सन् १८५७-५८ में क्रांतिकारियों ने नहीं मारा। इस बात की पुष्टि Edward Thompson की किताब The other side of the Medal में ग़दर के दौरान Provisional Civil Commissioner Sir George Campbell के इस बयान ''और मैं जानता हूं कि इलाहाबाद में बिना किसी लिहाज़ के थोक में कत्ल-ए-आम किया गया था।.... और इसमें नील ने वे काम किए जो कत्ल-ए-आम से भी अधिक भयंकर मालूम होते थे, उसने उन लोगों को जानबूझ कर इस तरह की यातनाएं देकर मारा जिस तरह की यातनाएं, जहां तक सबूत मिले हैं, हिन्दुस्तानियों ने कभी किसी को नहीं दी'' *(...and I know that at Allahabad, there were far too whole sale executions.... And afterwards Neill did things almost more than massacre putting to death with deliberate torture, in a way that has never been proved against the natives.)* से भी हो जाती है। एक अंग्रेज़ अधिकारी जो कमांडर इन चीफ एनसन के साथ अंबाला से दिल्ली की ओर कूच करती अंग्रेज़ी और देशी सेना के साथ था अपनी किताब History of the Siege of Delhi में लिखता है ''अंबाला से दिल्ली के रास्ते में पड़ने वाले लोगों के दिलोदिमाग पर अंग्रेज़ी दबदबा फिर से कायम करने के लिए सैंकड़ों गांवों के हजारों बेकसूर गांववासियों को बड़ी क्रूर यातनाएं दे देकर मार डाला गया। उनके सिर से एक एक बाल उखाड़ा जाता था। उनके शरीर को संगीनों से बिंधा जाता था और आखिर में मौत से पहले नेज़े और संगीनों की मदद से इन हिन्दू गांववासियों के मुंह में गाय का मास भी ठूंस दिया जाता था।''

सारे भारत में नहीं, तो कम से कम उत्तरी भारत में, १८५७ में लड़े गए प्रथम स्वाधीनता संग्राम का यदि आखिरी मुगल बादशाह बहादुर शाह था और हाथ पैर हजारों हिन्दू और मुस्लमान बहादुर सिपाही थे, तो उस संग्राम का दिल और दिमाग बख़्तखां पठान था। लेकिन दुर्भाग्य से गद्दार मिर्ज़ा इलाही बख्स की मक्कारी के जाल में उलझकर बादशाह जो कि लालकिला छोड़कर हुमायूं के मकबरें में आ चुका था, ने बख्तखां को कहा ''हमारी फिक्र न करो। मैं अपना मामला तकदीर के हवाले करता हूं.... मुझको मेरे हाल पर छोड़ दो और यहां से जाओ।'' बख्तखां का दिल टुकड़े-टुकड़े हो गया और वह गर्दन नीची करके मकबरे से बाहर निकल गया। कुछ क्षण बाद ही कप्तान हडसन ने वहां पंहुचकर पहले बादशाह को और बाद में उसके दोनों बेटों मिर्ज़ा मुगल और मिर्ज़ा अख्ज़र सुल्तान और पोते मिर्ज़ा अबूबकर को गिरफ्तार कर लिया। शहजादों को रथों में सवार करवाकर हडसन शहर की ओर चला और जब शहर लगभग एक मील रह गया तो उसने एक सिपाही के हाथ से बंदूक लेकर तीन फायर में तीनों को ढेर कर दिया। बाद में शहजादों के कटे सिर बादशाह को बतौर नज़राना पेश करते हुए हडसन ने कहा ''कम्पनी की ओर से यह आपकी नज़र है, जो वर्षों से बंद थी।'' ख्वाजा हसन निज़ामी अपनी किताब ''देहली की जांकनी'' में लिखता है कि बादशाह ने जवान बेटों और पोते के कटे हुए सिर हैरतअंगेज़ हौसले से देखकर मुंह फेरते हुए कहा ''अलहम्दोल्लिाह! तैमूर की औलाद ऐसे ही सुर्खरू होकर बाप के सामने आया करती थी'' कप्तान हडसन ने शहज़ादों के सिर खूनी दरवाजे के सामने लटकवाकर धड़ कोतवाली के सामने टंगवा दिए।

दिल्ली में अंग्रेज़ों द्वारा किए गए भयंकर हत्याकांड बारे हसन निज़ामी अपनी किताब में Lord Roberts की किताब Forty One Years in India के हवाले से लिखता है ''हम सुबह को लाहौरी दरवाजे से चांदनी चौक गए तो यकीनी तौर पर अहर हमें मुर्दों का अहर ही मालूम देता था। सिवाये हमारे घोड़ों की टापों से और कोई आवाज़ नहीं सुनाई देती थी। कोई ज़िन्दा आदमी नज़र नहीं आया। हर तरफ मुर्दों का बिछौना बिछा हुआ था जिनमें से कुछ मरने के इंतजार में सिसक रहे थे। चलते हुए हम बहुत धीमी आवाज़ में बात करते थे कि कहीं मुर्दे न चौंक पड़ें। एक ओर मुर्दा लाशों को कुत्ते खा रहे थे तो दूसरी ओर लाशों के इर्द-गिर्द जमा गिद्ध मास को नोच-नोच कर मज़ा ले रह थे। जिस तरह हर तरफ मुर्दों को देखकर हमें डर लगता था, उसी तरह हमारे घोड़े भी डरकर बिदकते और हिनहिनाते थे। लाशें पड़ी सड़ रही थीं और फिज़ा में हर सूह बीमारी फैलाने वाली बदबू फैल रही थी।''

The Times के संवाददाता Sir William Russel अपनी डायरी दूसरे खंड में लिखता है ''मुसलमानों को मारने से पहले उन्हें सूअर की खाल में सी दिया जाता था और उन पर सूअर की चर्बी मलकर उनके जिस्मों को जला देते थे और हिन्दुओं को स्वयं ही अपने को भ्रष्ट एवं कलुषित करने को विवश किया जाता था।'' *(Sewing Mohammedans in pigskin smearing them with porkfat before executing and burning their bodies and forcing Hindus to defile themselves)* इंगलैंड की संसद का एक सदस्य Mr. Layard जो इस तरह की अनेक घटनाओं की जांच करने के लिए स्वयं भारत आया था अपने एक बयान जो दि टाईम्स समाचार पत्र में २५ अगस्त, १८५८ को प्रकाशित हुआ था, कहता है ''बड़ी जिम्मेवारी और सावधानी से की गई जांच पड़ताल के बाद अच्छे से अच्छे और अधिक विश्वसनीय ज़रियों से जो सूचनाएं मुझे मिली हैं, उनसे मुझे पूरा यकीन हो गया है कि जो भयंकर अत्याचार कहे जाते हैं सिलसिलेवार रूप में दिल्ली, कानपूर, झांसी और दूसरे स्थानों पर अंग्रेज़ और बच्चों पर किए गए वे लगभग एक-एक करके सबके सब कलपित हैं, जिन्हें गढ़ने वालों को शर्म आनी चाहिए।''

इस प्रथम स्वाधीनता संग्राम के दौरान ऐसी असंख्य मिसालें मिलती हैं जहां क्रांतिकारियों और आम जनता ने अंग्रेज़, औरतों और बच्चों के अलावा शरण में आए अंग्रेज़ पुरुषों को भी हर प्रकार से सुरक्षा प्रदान की जबकि इसके विपरीत जनरल नील, फ्रैडरिक कूपर, हैवलॉक और हडसन जैसे अनेक अंग्रेज़ अफसरों ने जगह-जगह मानवता और नैतिकता से गिरे नीच एवं घृणित कृत्य किए। Governor General Lord Canning ने स्वयं २४ दिसम्बर, १८५७ को कोंसिल के अंदर कहा था ''न केवल छोटे-बड़े हर तरह के अपराधी बल्कि वे लोग भी जिनका अपराध कम से कम संदेहास्पद था, बिना किसी भेदभाव के फांसी पर लटका दिए गए। गांवों को आमतौर पर लूट लिया गया और जलाकर राख कर डाला गया। इस तरह कसूरवार और बेकसूर आदमी और औरत, बच्चे और बूढ़े सबको बिना भेदभाव के दंड दिया गया।''

—लखनपाल विला,
ऊना हाउसिंग कोपरेटिव कॉलोनी,
रक्कड़, ऊना १७४३०३

स्थान वृत्त

पश्चिम भारत का हृदय स्थल : जांगल प्रदेश बीकानेर

जानकी नारायण श्रीमाली

थार मरूस्थल की प्राचीन धरती आज बीकानेर क्षेत्र (बीकानेर-श्रीगंगानगर-चुरू) के नाम से विश्वविख्यात है। यह धरती जांगल धरा के नाम से युग-युग में प्रसिद्ध रही है। यह पश्चिम भारत का हृदयस्थल है। सन्तों, वीरों, वीरांगनाओं, सरल, सहृदयजनों की धरती! मीठे बोरों की, खेजडी, फोग जाल, बुई, सेवण और बोवटी की धरती!! अंत: सलिला सरस्वती की धरती! वही सरस्वती जिसकी वेदों में प्रार्थना की गई है और जो हजारों वर्षों से अमृतमय परिणामों से इस माटी का शृंगार करती आ रही थी।

इस धरती को यहां के पुरुषों ने अपनी वीरता तथा श्रम से और स्त्रियों ने अपने स्नेह और समर्पित कर्मण्यता से अभिषिक्त किया है। इस भूमि की रक्षा हेतु ***'बलिदान हुआ बेथाक अठै'*** अर्थात अगणित आर्य संतति, भूमि पुत्र बलिदान हुये। यौधेय, भाटी, परमार, पँवार और फिर राठौड़ों ने अपने रक्षा दायित्व हेतु, भू गौरव की रक्षा हेतु अपने और शत्रु रक्त से भू का तर्पण किया, तभी तो इसे ***'रगत पियोड़ी रज्ज'*** कहा गया है।

यह पावन धरा महाभारत काल में 'कुरु जांगल प्रदेश' के रूप में प्रसिद्ध थी। सम्राट बिंबिसार (५४३-४६०ई. पू.) तथा सम्राट स्कंद गुप्त (४५५ से ४८०ई.) के विजय अभियानों को आधार प्रदान करने वाली यहां की वीर जनशक्ति सदा वंदनीय रही है। सिकन्दर के आक्रमण के समय यौधेयों के प्रतिरोध का एक स्वर्णिम अध्याय है। यौधेयों के केन्द्र बड़ोपल (जिला हनुमानगढ़) और बड़ेरन महाजन के निकट जिला-बीकानेर प्रसिद्ध थे और उनकी धरती सिंहाण कोट—सिंहों के आवास— रूप में प्रसिद्ध थी।

जांगल प्रदेश का भूगोल

इन आक्रमणों के पश्चात् भी प्रत्येक राष्ट्रीय विपत्ति के परिहार में इस धरती के पुत्रों ने अपना दायित्व निभाया। सम्प्रति यह क्षेत्र पाकिस्तान, अहिच्छत्रपुर (नागौर) और कुरुक्षेत्र (हरियाणा) के बीच में स्थित हैं। श्रीगंगानगर का विशाल मरुस्थल पहले गंगा नहर और अब इंदिरा गांधी नहर के आ जाने से हरा-भरा हो गया है। बीकानेर का कुछ क्षेत्र सिंचित हैं किन्तु शेष क्षेत्र (चुरू समेत) वर्षा जल और कुओं पर निर्भर है। फिर भी चराचर के प्रति मैत्री, करूण भावना और आत्मीयता की भावना के कारण इस क्षेत्र में खेजड़ी तथा क्षेत्रीय वृक्षों एवं वनौषधियों का बाहुल्य है। इसीलिए इसे जांगल प्रदेश-वनों की, जंगलों की धरती कहा जाता है। इस क्षेत्र में जोड़-बीड़, ओरण-कांकड़ की आन ने हजारों वर्षों से पर्यावरण को सुरक्षित रखा है।

यहां का मुख्य व्यवसाय पशु पालन रहा है। ऊंट यहां का मुख्य पशु है। श्रेष्ठी व्यापार निपुण और महिलाएं शीलवती व आभूषण प्रेमी होती है। कहा है— ऊँट, मिठाई, स्त्री, सोनो-गहणों

शाह! पांच चीज पृथ्वी सिरे, वाह बीकाणा वाह!

प्राचीन इतिहास व सभ्यता

यहां सरस्वती के किनारे वेदों के दर्शन हुए और उपनिषदों व संहिताओं का सृजन हुआ। यह क्षेत्र मन्दिरों, तीर्थों और साधनास्थलों से भरा है। भारत के प्रसिद्ध शाक्त मत का इस क्षेत्र में अत्यधिक प्रभाव रहा है। वैष्णव शैव गणपत्य और सूर्य उपासकों की यह आश्रय स्थली है। ब्राह्मण परम्परा के साथ श्रमण परम्परा, इस क्षेत्र में प्राचीन काल से पल्लिवित है। यहां पूगल की मारु प्रेमकथा ढ़ोला-मारु के रूप में विश्व विख्यात है।

कालीबंगा

सरस्वती और दृषद्वती नदियों से सिचिंत यह क्षेत्र प्राचीन भारत का महत्वपूर्ण क्षेत्र है। कालीबंगा की खुदाई से निश्चयपूर्वक प्रमाणित हुआ है कि यह क्षेत्र विश्व संस्कृति का हृदय स्थल रहा है। यहां श्रेष्ठ जीवन पद्धति और आदर्श शासन व्यवस्था थी। कालीबंगा—विशाल साम्राज्य की गौरवमयी राजधानी थी। पद्मश्री डॉ. वाकणकर जी ने यहां काफी कार्य किया इस क्षेत्र में अनूपगढ़ भी इसी सभ्यता का साक्षी है।

बीकानेर— वि. सं. १५४५ में राव बीकाजी ने इस नगर की स्थापना की। इससे पूर्व में यह क्षेत्र जांगलू और पूगल के प्रभाव में था। राव बीकाजी तथा उनके उत्तराधिकारियों के काल में बीकानेर ने खूब उत्कर्ष किया ओर राष्ट्रीय महत्व प्राप्त किया।

महाजन— यह प्राचीन सिंहाणकोट (यौद्येयों का क्षेत्र) राव जैतसी के अग्रज रतनसिंह राठौड़ के वंशजों का केन्द्र रहा। अनुज के पक्ष में राज्य त्याग के कारण रतन सिंह को — सारां में सरदार रुड़ों रतनसी सम्बोधित किया जाता हैं अब इस क्षेत्र का अधिकांश भाग भारतीय सेना हेतु रक्षित है।

नौहर—भादरा—पल्लू — हनुमानगढ़ जिले में स्थित ये प्राचीन सरस्वती सभ्यता के स्थान है। पल्लू (चूरू) में प्राप्त 'जैन सरस्वती' की २ प्रतिमाएं, एक बीकानेर के संग्रहालय तथा एक दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय की शोभा है।

श्रीगंगानगर — पाकिस्तान के साथ सटी भारतीय सीमा स्थित यह नगर और उर्वर धरा धन-धान्य समृद्ध और राष्ट्रीय विकास में सहयोगी है। प्राचीन काल से यह नदियों की क्रीड़ा भूमि भी रही है।

बीदासर— राव बीका जी के भाई बीदा जी के नाम पर बसा है बीदासर—द्रोणपुर बीदाजी राती घाटी युद्ध के प्रधान सेनापति थे।

कोडमदेसर — बीकानेर से २४ किमी. दूर स्थित यह रम्य स्थलों कोडमदेसर भैरुजी की और सती कोडमदे के लिए विख्यात है बीकानेर के पूर्व राजा बीकाजी ने कोडमदेसर में दुर्ग बनाने का प्रयास किया था।

ढाणी पांडुसर — वर्तमान बीकानेर राज्य की स्थापना से पूर्व इस क्षेत्र में जाटों का प्रभुत्व था। पांडु गोदारा के सहयोग से राव बीकाजी ने यहां अपना राज्य स्थापित किया।

तीर्थस्थल :

यहां का सर्वाधिक प्रसिद्ध तीर्थ श्री कोलायत जी है। यह सरस्वती नदी का तीर्थ है और यहां सांख्य दर्शन प्रणेता कपिल मुनि जी ने अपनी माता देवहुति को उपदेश दिया था। कपिल मुनि जी के मन्दिर में महर्षि कपिल जी, महर्षि वशिष्ठ जी और गरुड़ भगवान की प्रतिमाएं हैं। इस विशाल और रम्य सरोवर के चारों ओर प्राचीन काल में ऋषियों के आश्रम थे जिनको लोक-जीवन में क्रमश: जागेरी (याज्ञवल्क्य जी का) और दियातरा (दत्तात्रेय जी का) का तप: स्थान माना जाता है। कार्तिक पूर्णिमा को यहां विशाल मेला लगता है।

इस क्षेत्र में नाथ पंथ का विशेष प्रभाव रहा, जिनके अनेक स्थान हैं। इन स्थानों में सिद्ध भोम सैंगाल प्रसिद्ध हैं। रामस्नेही सम्प्रदाय और दादू पंथी सम्प्रदायों की भी इस क्षेत्र को महान् देन है, पुष्टि मार्ग की भक्ति यहां बलवती है। इस मरु क्षेत्र में प्रभु महावीर की करुणा धारा का भी अजस्र प्रवाह रहा। ८वीं सदी से १८वीं सदी तक जैन सन्तों ने लोक जीवन के साथ मुस्लिम सत्ता को भी प्रभावित किया। बीकानेर के जिनचन्द्र सूरी जी को, जो चौथे दादाजी के नाम से विख्यात हैं, 'अकबर प्रतिबोधक' माना जाता है।

विदेशी हमलावरों से संघर्ष

भारत पर अधिकांश आक्रमण मध्य एशिया से गांधार (अफगानिस्तान) की ओर से लाहौर होकर हुए हैं। लाहौर के दक्षिण पश्चिम में यह जांगल धरा स्थित है। इस मरुधरा ने प्रत्येक विदेशी आक्रमण का प्रतिकार, अपनी पूरी शक्ति से किया। इस क्षेत्र की विकट परिस्थितियों के कारण आक्रांता मैदानी इलाकों की भांति यहां की जनता का सर्वनाश नहीं कर सके, अपितु मुगल आक्रमणकारी बाबर ने तो इस रेगिस्तान को 'आक्रांताओं का कब्रिस्तान' कहा था। बीकानेर के पश्चिम में मुल्तान (मूलस्थान) स्थित है। यह हिरण्य कश्यप की राजधानी, आर्यों का उद्गम स्थल और दिव्य सूर्य मन्दिर के लिए प्रसिद्ध रहा है। इस पर मुहम्मद बिन कासिम (७१२ ई.) के समय से लगातार आक्रमण होते रहे तथा मरुभूमि से बराबर रक्षा प्रयास में सहयोग किया गया। पश्चिम सीमा पर भीषण आक्रमणों के कारण पीछे हटने पर मजबूर भारतीय योद्धाओं ने जैसलमेर, पूगल और भटनेर के प्रसिद्ध किलों से प्रतिरोध जारी रखा। प्रतिरोध की अगणित घटनाओं में से यहां मात्र एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा राहा है—

रातीघाटी का विजयी युद्ध — बाबर और राणासांगा के बीच हुए भीषण खानवा युद्ध (१५२७ ई.) के शीघ्र पश्चात् १५३४ ई. में बाबर के पुत्र कामरान और राव बीकाजी के पौत्र राव जैतसी के बीच थार मरुस्थल के भाग्य का फैसला करने वाला युद्ध हुआ, जिसमें निर्णय राष्ट्रवादी शक्तियों के पक्ष में रहा। आक्रमणकारियों से संघर्ष के इतिहास का यह विजयी युद्ध एक स्वर्णिम अध्याय हैं।

लाहौर तथा काबुल के शासक कामरान ने बीकानेर पर आक्रमण से पूर्व भटनेर (हनुमानगढ़) को जीतना आवश्यक समझा। भटनेर में राव कांधल जी के पौत्र वीर खेतसी ने भीषण युद्ध तथा साका किया। इस बीच राव जैतसी ने युद्ध की भली प्रकार तैयारी कर ली। उन्होंने भटनेर से बीकानेर के मार्ग को जनशून्य बनाने और शत्रु को अधिकतम बाधा डालने की नीति अपनाई। मार्गवर्ती 'महाजन' परगने से रूड़ों रतनसी (खेतसी का अग्रज) मुख्य युद्ध हेतु सेना सहित बीकानेर

पहुंचा। राव जैतसी ने इस राष्ट्रीय युद्ध के महत्त्व का सही आकलन किया और खानवा युद्ध की सहभागी सभी शक्तियों तथा अपने परिजनों, मित्रों को युद्ध निमंत्रण भेजा। राव जैतसी के साथ खेड़ (बाड़मेर) से लेकर सर्वदूर फैले राठौड़ों के कुल पुरुष युद्धार्थ आए जिनमें चित्तौड़ के महानायक विश्व प्रसिद्ध योद्धा जयमल राठौड़ भी सम्मिलित थे। पूगल, जैसलमेर, जयपुर तथा शेखावाटी के राजकुमार, सिरोही के चौहान तथा देवड़े, साँचोर के चौहान, बूंदी के हाड़ा, अजमेर के चौहान राजा नेनसी, जांगलू परमार और सांखले, अमरकोट (सिन्ध) के सोढ़ा सहित पूरे राजपूताने ने इस युद्ध में भाग लिया। उल्लेखनीय है कि चित्तौड़ १५३४ ई. में गुजरात के मुसलमान शासकों से जूझ रहा था और वहां की रानी कर्मवती ने इसी युद्ध में जौहर किया था। अत: चित्तौड़ इस युद्ध में भाग न ले सका। रातीघाटी युद्ध का यह अतिविशिष्ट पक्ष है कि बीकानेर क्षेत्र के ब्राह्मण और वैश्य, यहां तक कि एक महन्त सन्त नाथ ने भी युद्ध में भाग लिया। इस क्षेत्र के मुसलमान भी जैतसी के झंड़े तले लड़े। जैतारण पट्टी के किसान राजपूत भी जैतसी की ओर से लड़े।

इसी प्रकार कामरान के पक्ष में सिन्ध, पंजाब और अफगानिस्तान था जबकि जैतसी के पक्ष में पूरा राजपूताना और सिन्ध का कुछ क्षेत्र युद्धरत हुआ था। युद्ध में जेतसी के ८-८ पुत्र युद्ध में जूझे थे। इस प्रकार सर्वस्व दांव पर लगाकर मार्गशीर्ष कृष्ण ४ (२३ अक्टूबर, १५३४) को यह युद्ध लड़ा और जीता गया। कामरान की फौज का पड़ाव ४ कोस में था। कामरान की फौज में ७२ उमराव थे। जैतसी ने अपनी फौज को सर्वोच्च सेनापति सांगोजी बीदावत के नेतृत्व में १०८ भागों में बांटा। १०८ सेनापति नियुक्त किये गये जिन्हें ३ प्रधान सेनापति निर्देशित कर रहे थे। स्वयं जैतसी सेना के अग्रभाग में अंगरक्षकों सहित उपस्थित था।

अर्धरात्रि में राव जैतसी ने कामरान की सेना पर आक्रमण किया। वास्तविक सेना के अलावा राव जैतसी ने हजारों बैलों के सीगों पर मशालें बांधकर, उन्हें बहुत दूर से हांका। भीषण किन्तु संक्षिप्त युद्ध मे ंराव जैतसी स्वयं कामरान के शिविर पर जा पहुंचा। जब कामरान ने स्थिति को जांचा तो उसके विश्वस्त सैय्यद अंगरक्षकों में से एक भी जीवित नहीं था। कामरान भाग निकला। राव जैतसी ने मुल्तान तक उसका पीछा किया।

ऐसी यशस्वी यह जांगलधर भूमि अपने राष्ट्रीय दायित्व के निर्वहन में सदैव अग्रणी रही है और भविष्य में भी रहेगी।

विजय दिवस — भारतीय इतिहास संकलन समिति, बीकानेर प्रति वर्ष मार्गशीष कृष्ण ४ को विजय दिवस मनाती है। एक वर्ष व्याख्यान माला तथा दूसरे वर्ष ५००१/—रु. का राती घाटी पुरस्कार प्रदान किया जाता है। अब तक मा. श्री मोरोपन्त जी पिंगले, पुणे, ठाकुर रामसिंह जी, नई दिल्ली और ठाकुर भूरसिंह फेकाणा को राती घाटी राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान किया जा चुका है।

वर्ष २००८ का रातीघाटी राष्ट्रीय पुरस्कार दिनांक ७.९.२००४ जन्माष्टमी को बीकानेर में हजार लोगों की अमर सभागार डी. पी. एस. में आयोजित सभा में एथेन्स ओलम्पिक में रजत पदक विजेता, भारत गौरव राज्यवर्द्धन सिंह राठौड़ को प्रदान किया गया है।

सचिव,
अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना,
ब्रह्मपुरी चौक, बीकानेर (राजस्थान)